

[2014] 13 एस.सी.आर. 244

मैसर्स नोवा एड्स

बनाम

मेट्रोपॉलिटन ट्रांसपोर्ट कॉर्पोरेशन एवं अन्य

(सन् 2009 की रिट याचिका (दीवानी) सं. 223)

12 दिसम्बर, 2014

[दीपक मिश्रा तथा उदय उमेश ललित, न्यायमूर्तिगण]

चेन्नई सिटी म्यूनिसिपल कॉर्पोरेशन अधिनियम, 1919 -

धाराएँ 203, 285, 285-ए, 295-बी, 285-सी - यात्रियों के लिए बस आश्रयों के निर्माण से निपटने की शक्ति - अभिनिर्धारित: बस आश्रयों से निपटने की शक्ति कॉर्पोरेशन के पास है तथा एम.टी.सी.एल. को इसके साथ निपटने की कोई शक्ति अथवा प्राधिकार नहीं है।

विधान - अभिनिर्धारित: नियम, विनियम तथा अधिसूचना विधि के अंतर्गत निहित सिद्धांतों का अतिक्रमण नहीं कर सकते।

समता - प्रदान की - अभिनिर्धारित: विधि के उल्लंघन में प्रदान नहीं की जा सकती।

विधियों की व्याख्या - शब्दों का व्याकरणिक/सामान्य अर्थ - अभिनिर्धारित: किसी प्रावधान अथवा शब्द की व्याख्या करने का प्रयास करने से पूर्व प्रत्येक प्रावधान तथा प्रत्येक शब्द को सामान्य रूप से देखा जाना चाहिए - विधि में शब्दों की व्याख्या व्याकरणिक अर्थ में की जानी चाहिए।

संविदाएँ - सरकारी संविदाएँ - निविदा - अभिनिर्धारित: सार्वजनिक प्राधिकारी को निविदा बुलाए बिना निजी वार्ताओं में प्रवेश नहीं करना चाहिए - जब भी संविदा प्रदान की जानी हो अथवा लाइसेंस दिया जाना हो सार्वजनिक प्राधिकारी के लिए पारदर्शी तथा निष्पक्ष विधि अपनाना अनिवार्य है।

अपीलों का निस्तारण करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1. धारा 203 के विश्लेषण से प्रदर्शित होता है कि सभी सार्वजनिक सड़कें तथा उनके उपांग जो केन्द्रीय अथवा राज्य सरकार के नियंत्रण के लिए आरक्षित नहीं हैं निगम में निहित होंगे। धारा 203 की उप-धारा 2 राज्य सरकार को किसी सड़क, नाली, जल-निकास, सुरंग, पुलिया अथवा वृक्ष को निगम के नियंत्रण से वापस लेने के लिए अधिसूचना जारी करने की शक्ति प्रदान करती है। धारा 203(1) के अनुसार सार्वजनिक सड़कें जो निगम में निहित हैं जब तक कि वे केन्द्रीय सरकार अथवा राज्य सरकार के लिए आरक्षित न हों अथवा कुछ सड़कों तथा अन्य वस्तुओं के संबंध में नियंत्रण से वापस लेने के लिए अधिसूचना जारी न की गई हो निगम का पूर्ण नियंत्रण है। धारा 204 यह परिकल्पना करती है कि सार्वजनिक सुरक्षा तथा सुविधा के लिए आवश्यक तथा सुविधाजनक सड़कों का अनुरक्षण, मरम्मत तथा सुधार करना निगम का कर्तव्य है। मुख्य शब्द "सुरक्षा" तथा "सुविधा" हैं तथा वह निगम की जिम्मेदारी है। धारा 214 सार्वजनिक सड़कों के उपांगों तथा सामग्रियों की सुरक्षा प्रदान करती है। यह निर्धारित करती है कि किसी व्यक्ति के लिए आयुक्त की अनुमति के बिना किसी सार्वजनिक सड़क की बाड़, खंभे, फर्श, पत्थर अथवा अन्य सामग्री को विस्थापित करना, उठाना अथवा उनमें कोई परिवर्तन करना विधिसम्मत नहीं होगा। आयुक्त निगम का आयुक्त है। [कंडिका 15 से 18][266-एफ-एच; 267-बी-एच; 268-ए]

2. धारा 285 आयुक्त को सार्वजनिक अवतरण स्थल, ठहराव स्थान, कार्ट स्टैंड, पशु-शेड तथा गौ-शाला का निर्माण अथवा प्रदान करने तथा उनके उपयोग के लिए शुल्क लगाने की शक्ति प्रदान करती है जो निगम की स्थायी समिति द्वारा निर्धारित किया जाता है। कार्ट स्टैंड में मोटर यान अधिनियम, 1939 के अर्थ में वाहन सहित गाड़ियों के स्टैंड शामिल हैं। धारा 285-बी कार्ट स्टैंड शुल्क आदि की वसूली से संबंधित है। उक्त प्रावधान की जांच पर यह निहित है कि निगम का आयुक्त धारा 285-बी की उप-धारा (1) के अंतर्गत लगाए गए शुल्क का भुगतान न होने पर वसूली के उद्देश्य से उचित कार्यवाही करने की शक्ति रखता है।

धारा 285-सी निजी कार्ट स्टैंड के लिए अनुज्ञप्ति शुल्क से संबंधित है। प्रावधान यह भी परिकल्पना करता है कि कोई व्यक्ति नया कार्ट स्टैंड न खोले अथवा निजी कार्ट स्टैंड खुला न रखे जब तक कि वह आयुक्त से ऐसा करने के लिए अनुज्ञप्ति प्राप्त न कर ले तथा स्थान के स्वामी को अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन करना अपेक्षित है। [कंडिका 19, 22 तथा 23][268-बी; 270-सी-डी; 271-सी-ई]

3. धारा 285-ए आयुक्त को किसी व्यक्ति द्वारा सार्वजनिक स्थान अथवा सार्वजनिक सड़क के किनारों को कार्ट स्टैंड आदि के रूप में उपयोग करने को ऐसी दूरी के भीतर निषिद्ध करने का प्राधिकार देती है जिसे स्थायी समिति द्वारा निर्धारित किया जाना है। परंतु एक अपवाद कार्यान्वित करता है जो यह अधिरोपित करता है कि धारा 285-ए में निहित कुछ भी आयुक्त को शहर में किसी स्थान के उपयोग को राज्य सरकार द्वारा राज्य सरकार के परिवहन विभाग के स्वामित्व वाले मोटर वाहनों के लिए अकेले स्टैंड के रूप में निषिद्ध करने का प्राधिकार नहीं समझा जाएगा। चूँकि धारा 285 “कार्ट स्टैंड” शब्द का प्रयोग करती है तथा संशोधन द्वारा यह विनिर्दिष्ट किया गया है कि कार्ट स्टैंड 1939 अधिनियम के अर्थ में वाहन सहित गाड़ी के लिए “स्टैंड” होगा। धारा 285-ए का परंतुक भी “मोटर वाहनों के लिए अकेले स्टैंड” अभिव्यक्ति का प्रयोग करता है। विधि में शब्दों की व्याख्या उनके व्याकरणिक अर्थ में की जानी चाहिए। युक्तियुक्ता अथवा अन्यथा केवल तब प्रासंगिक होती है जब विधि स्पष्ट नहीं है। इस प्रकार मोटर वाहनों के लिए स्टैंड उसके व्याकरणिक संदर्भ में काफी स्पष्ट है तथा निश्चित अर्थ व्यक्त करता है। यह मूलतः मोटर वाहन के लिए स्टैंडों की व्यवस्था करने का अर्थ रखता है। धारा 285 में प्रयुक्त शब्द कार्ट स्टैंड है। स्पष्टीकरण स्पष्ट रूप से कहता है कि इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए कार्ट स्टैंड में मोटर वाहन शामिल होंगे। निगम को अधिनियम द्वारा कार्ट स्टैंड की व्यवस्था करने का प्राधिकार दिया गया है। जब मोटर वाहनों के लिए स्टैंड के बारे में सोचा जाता है यह केवल पार्किंग स्थान का अर्थ रखता है। वह शब्द का लोकप्रिय अर्थ है। “स्टैंड” यदि कोई यह कल्पना करना चाहे कि वह यात्रियों के लिए

आश्रयों को शामिल करेगा यह घोरतः अयुक्तियुक्त व्याख्या होगी। इसे सामान्य बोलचाल अर्थ दिया जाना चाहिए। [कंडिका 26, 27 तथा 29][272-डी-एफ; 273-बी-सी; 247-जी-एच; 248-ए-बी]

4. समस्त अधिनियम की योजना सार्वजनिक सड़कों पर नियंत्रण रखने की शक्ति निगम को प्रदान करना तथा सार्वजनिक सुविधा के लिए व्यवस्थाएँ करना है। स्टैंडों की व्यवस्था करना निगम का दायित्व है। इसके अतिरिक्त निगम अथवा उसका प्राधिकृत अधिकारी आयुक्त परिवहन निगम के लिए मोटर वाहनों हेतु स्टैंड निषिद्ध नहीं कर सकता। विधायी आशय अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों में प्रयुक्त भाषा से पूर्णतः स्पष्ट है। व्याख्या का उद्देश्य विधानमंडल की मंशा अथवा विधि की भावना को समझना तथा संग्रह करना है। यदि प्रावधानों को विधिक व्याख्या से संबंधित इन सिद्धांतों के कसौटी पर समझा जाए तो कोई संदेह का लेश नहीं रहता कि विधानमंडल ने सार्वजनिक सुविधा के लिए आवश्यक कार्यवाही करने तथा कार्ट स्टैंड की व्यवस्था करने की शक्ति निगम को प्रदान की है जिसमें मोटर वाहन शामिल हैं। अधिनियम की धारा 285-ए के परंतुक द्वारा सृजित अपवाद दूर से भी यह संकेत नहीं देता कि विधानमंडल ने एम.टी.सी.एल. जैसे राज्य उपक्रम जो राज्य उपक्रम है के लिए बस आश्रयों के निर्माण की भी कल्पना की है। अधिनियम की धारा 285-ए के परंतुक में जो अंकित किया गया है वह यह है कि निगम अथवा उसका एजेंट शहर में किसी स्थान के उपयोग को राज्य सरकार के परिवहन विभाग के स्वामित्व वाले मोटर वाहनों के लिए स्टैंड के रूप में निषिद्ध नहीं कर सकता। अधिनियम की धारा 285-ए को अधिनियम की धारा 285 के साथ संयोजन में पढ़ा जाना चाहिए तथा किसी भी प्रकार के संकेत से इसे बस आश्रयों को शामिल करने के लिए नहीं पढ़ा जा सकता। “स्टैंड” शब्द को उसके दिए गए सामान्य अर्थ के अनुसार समझा जाना चाहिए। उसके अलावा पाठ, संदर्भ तथा शब्दों के प्रयोग का प्रतिरूप यह संकेत देते हैं कि यह मोटर वाहनों के लिए स्टैंड प्रदान करने के लिए अभिप्रेत है। [कंडिका 30, 31][275-एच; 276-ए-बी; 277-बी-एफ]

5. *उत्कल कॉन्ट्रैक्टर्स में अभिनिर्धारित किया गया था कि विधि में कोई प्रावधान तथा विधि का कोई शब्द पृथक् रूप से नहीं समझा जा सकता। किसी प्रावधान अथवा शब्द की व्याख्या करने का प्रयास करने से पूर्व प्रत्येक प्रावधान तथा प्रत्येक शब्द को सामान्य रूप से देखा जाना चाहिए। उक्त सिद्धांत को लागू करते हुए एकमात्र निष्कर्ष यह होगा कि निगम को कार्ट स्टैंड से निपटने का प्राधिकार है जिसमें मोटर वाहन शामिल हैं तथा अधिनियम की धारा 285 के परंतुक में प्रयुक्त "स्टैंड" केवल मोटर वाहनों के लिए स्टैंड का उल्लेख करता है तथा बस आश्रयों को शामिल नहीं कर सकता। "स्टैंड" मोटर वाहन के लिए या तो "पार्किंग स्थान" अथवा "ठहराव स्थान" का अर्थ व्यक्त करता है। सामान्य बोलचाल में "स्टैंड" तथा "यात्रियों के लिए आश्रय" काफी भिन्न हैं। उन्हें समान अर्थ नहीं दिया जा सकता। राज्य सरकार कुछ स्थानों को राज्य सरकार के परिवहन विभाग के मोटर वाहनों के लिए स्टैंड के रूप में विनिर्दिष्ट करने वाली अधिसूचना जारी कर सकती थी जिसमें राज्य परिवहन उपक्रम अर्थात् एम.टी.सी.एल. शामिल हो सकते हैं किन्तु राज्य सरकार को राज्य परिवहन उपक्रमों को यात्रियों के लिए आश्रय प्रदान करने की अनुमति देने वाली अधिसूचना जारी करने का कोई विधिक प्राधिकार नहीं है। यह विधि में अच्छी तरह स्थापित है कि न तो नियम न ही विनियम न ही अधिसूचना अधिनियम के अंतर्गत निहित सिद्धांतों का अतिक्रमण कर सकती है। [कंडिका 31, 32 तथा 35][277-जी; 278-ए; ई-एफ; 280-एफ-एच; 281-ए]

*उत्कल कॉन्ट्रैक्टर्स एंड जॉइनरी प्रा. लि. एवं अन्य बनाम उड़ीसा राज्य एवं अन्य (1987) 3 एस.सी.सी. 279 : 1987 (3) एस.सी.आर. 317 – संदर्भित।

6. वर्तमान मामले में चूँकि बस आश्रयों से निपटने का प्राधिकार निगम का है न कि एम.टी.सी.एल. का समता को विधि के समक्ष झुकना होगा। अपीलकर्ताओं का अभिकथन कि उन्होंने संरचनाएँ खड़ी करने में बड़ी राशि व्यय की है तथा उस संबंध में कुछ सहायक कार्य भी किए हैं तथा इसलिए उचित विस्तार दिया जाना चाहिए समता के दायरे में है। इसे प्रदान

नहीं किया जा सकता क्योंकि वह विधि का उल्लंघन करेगा। एम.टी.सी.एल. तथा अपीलकर्ताओं के बीच संविदा निगम को बाध्य नहीं कर सकती। यदि संविदा में कोई अनियमितता अथवा कोई चूक होती तो समता के सिद्धांत को आह्वान करने का प्रश्न उत्पन्न हो सकता था किन्तु जैसा कि प्रत्यक्ष है यह दो पक्षकारों के बीच एक ऐसे कार्य के संबंध में करार है जिसमें एक पक्षकार प्रवेश करने का हकदार नहीं है क्योंकि उसके पास कोई विधिक प्राधिकार नहीं है। उसके अलावा समता के मुद्दे से निपटते समय पक्षकारों के आचरण को देखा जाना है। उच्च न्यायालय ने निगम के पक्ष में रिट याचिका का निर्णय किया था। एम.टी.सी.एल. पूर्णतः अवगत था कि उसके पास बस आश्रयों के लिए किसी प्रकार की संविदा में प्रवेश करने का कोई प्राधिकार नहीं है क्योंकि वह निगम के दायरे में था। इस न्यायालय ने किसी भी समय उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के क्रियान्वयन पर स्थगन नहीं दिया था। एम.टी.सी.एल. ने अपीलकर्ताओं के साथ समझौता/निपटान किया तथा समझौते के आधार पर करार में प्रवेश किया। करार में इस न्यायालय के आदेश का उल्लेख है जिसमें वर्णित है कि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में करार में प्रवेश किया गया। इस न्यायालय ने उस संबंध में कभी कोई आदेश/निर्देश पारित नहीं किया था। न्यायालय ने मामले का निपटारा समझौते के आधार पर किया था। इस न्यायालय द्वारा कोई निर्णय नहीं था। ऐसी स्थिति में जब पक्षकारों ने करार में प्रवेश किया तथा पूर्णतः जानते हुए कि उच्च न्यायालय का निर्णय उनके सामने घूर रहा था जिसे सहन नहीं किया जा सकता। यह अपीलकर्ताओं की ओर से एम.टी.सी.एल. के साथ मिलीभगत से निगम के विधिक अधिकारों को विफल करने का स्पष्ट छल था। यह लाभ प्राप्त करने के लिए अभिप्रेत धोखा है। यह अलग बात है कि निगम अपनी रुचि बचाने के लिए नहीं जागा। रिट याचिकाकर्ता ने अपनी व्यक्तिगत रुचि के लिए आदेश के प्रत्याहरण की प्रार्थना की तथा उसके बाद जैसा कि हम पाते हैं निगम निद्रा से जागा। यह निगम के लिए हानि थी तथा निगम सार्वजनिक निकाय है तथा अपेक्षा है कि वह अधिनियम के अंतर्गत कवर व्यक्तियों के

लाभ के लिए अपनी वित्त व्यवस्था की सुरक्षा तथा संचालन करे। अपीलकर्ताओं का आचरण किसी भी कोण से पूर्णतः निंदनीय है। [कंडिका 45, 46 तथा 51] [283-डी-जी; 284-ए-जी; 287-बी-डी]

7. निगम जैसे सार्वजनिक प्राधिकारी को निविदा बुलाए बिना निजी वार्ताओं में प्रवेश नहीं करना चाहिए विशेषकर यात्रियों के लिए बस आश्रय प्रदान करने के उद्देश्य से संविदा में प्रवेश करते समय। यह विधि में अच्छी तरह स्थापित है कि जहाँ भी संविदा प्रदान की जानी हो अथवा अनुज्ञप्ति दी जानी हो सार्वजनिक प्राधिकारी के लिए पारदर्शी तथा निष्पक्ष विधि अपनाना अनिवार्य है। यह दो उद्देश्यों की पूर्ति करता है अर्थात् सभी पात्र प्रतियोगियों की भागीदारी तथा उन्हें निष्पक्ष अवसर देना तथा अधिकतम राजस्व उत्पन्न करना भी। अच्छे कारणों से स्थिति हो सकती है जिसमें संविदा निजी वार्ता द्वारा प्रदान की जा सकती है किन्तु वह बहुत अपवादात्मक परिस्थिति में होना चाहिए क्योंकि पारदर्शिता के अभाव में जन विश्वास न केवल डगमगाता है बल्कि चूर-चूर हो जाता है। वर्तमान मामले में चूँकि संविदा कुछ प्रकार की समझ के द्वारा प्रवेश की गई है जिसका कारण काफी अगम्य है इस सिद्धांत को लागू करते हुए ऐसी संविदा को दूषित मानना होगा।

[कंडिका 52, 53] [287-एफ-एच; 288-ई-जी]

8. अपीलकर्ताओं द्वारा एम.टी.सी.एल. के साथ मिलीभगत से छल किया गया तथा एम.टी.सी.एल. के अधिकारी पूर्ण ज्ञान के साथ विधि के विरुद्ध तथा निगम के हित के विरुद्ध कार्य किए। लाभार्थी अपीलकर्ता हैं। एम.टी.सी.एल. के पदाधिकारियों के संबंध में एम.टी.सी.एल. के पदाधिकारियों के विरुद्ध कुछ कार्यवाहियाँ लंबित हैं। निगम को अपनी रुचियों की सुरक्षा के लिए सतर्क रहना चाहिए था। अपीलकर्ताओं द्वारा एम.टी.सी.एल. के साथ प्रवेश की गई संविदाएँ बनाए नहीं रखी जा सकती तथा वे तदनुसार रद्द की जाती हैं। निर्देश दिया जाता है कि निगम बस आश्रयों का प्रबंधन तत्काल ग्रहण कर लेगा तथा सभी उद्देश्यों के लिए उनके साथ निपटने के लिए निविदा अथवा नीलामी की प्रक्रिया का सहारा

लेगा जो निष्पक्ष तथा पारदर्शी होनी चाहिए। [कंडिका 54, 55] [288-जी-एच; 289-ए-बी; जी-एच; 290-ए]

सिटी ऑफ विक्टोरिया बनाम बिशप ऑफ वैंकूवर आइलैंड
ए.आई.आर. 1921 पी.सी. 240; के.पी. वर्गीज बनाम इनकम
टैक्स ऑफिसर, एर्नाकुलम एवं अन्य (1981) 4 एस.सी.सी.
173 : 1982 (1) एस.सी.आर. 629; द कमिश्नर ऑफ सेल्स
टैक्स, मध्य प्रदेश, इंदौर बनाम एम/एस. जसवंत सिंह चरण
सिंह ए.आई.आर. 1967 एस.सी. 1454 : 1967 एस.सी.आर.
720; ग्रासिम इंडस्ट्रीज लि. बनाम कलेक्टर ऑफ कस्टम्स,
बॉम्बे (2002) 4 एस.सी.सी. 297 : 2002 (2) एस.सी.आर.
945; दलिप सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (2010)
2 एस.सी.सी. 114 : 2009 (16) एस.सी.आर. 111 – भरोसा
किया।

जनरल ऑफिसर कमांडिंग-इन-चीफ बनाम डॉ. सुभाष चंद्र
यादव (1988) 2 एस.सी.सी. 351 : 1988 (3) एस.सी.आर.
62; बी.के. गराड बनाम नासिक मर्चेन्ट्स को-ऑप. बैंक लि.
(1984) 2 एस.सी.सी. 50 : 1984 (1) एस.सी.आर. 767:
एडिशनल डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट (रेव.), दिल्ली एडमिनिस्ट्रेशन
बनाम श्री राम (2000) 5 एस.सी.सी. 451 : 2000 (3)
एस.सी.आर. 1019; केदार लाल सील एवं अन्य बनाम हरी
लाल सील ए.आई.आर. 1952 एस.सी. 47 : 1952
एस.सी.आर. 179; राजा राम महादेव परांजपे एवं अन्य बनाम
आबा मारुति माली एवं अन्य ए.आई.आर. 1962 एस.सी.

753 : 1962 सप्ल. एस.सी.आर. 739; पी.एम. लता एवं अन्य बनाम केरल राज्य एवं अन्य (2003) 3 एस.सी.सी. 541 : 2003 (2) एस.सी.आर. 653; रघुनाथ राज बरेजा एवं अन्य बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य (2007) 2 एस.सी.सी. 230; मदनांची रामप्पा बनाम मुथालुरु बोज्जप्पा ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 1633 : 1964 एस.सी.आर. 673; लक्ष्मीनारायण आर. भट्ट बनाम महाराष्ट्र राज्य (2003) 5 एस.सी.सी. 413 : 2003 (3) एस.सी.आर. 409; नसीरुद्दीन बनाम सीता राम अग्रवाल (2003) 2 एस.सी.सी. 577 : 2003 (1) एस.सी.आर. 634; ई. पलानीसामी बनाम पलानीसामी (2003) 1 एस.सी.सी. 123; इंडिया हाउस बनाम किशन एन. लालवानी (2003) 9 एस.सी.सी. 393 : 2002 (5) सप्ल. एस.सी.आर. 522; अमर सिंह बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य (2011) 7 एस.सी.सी. 69 : 2011 (6) एस.सी.आर. 403; वेस्टमिंस्टर कॉर्पोरेशन बनाम लंदन एंड नॉर्थ वेस्टर्न रेलवे (1905) ए.सी. 426; बिहार राज्य बनाम कामेश्वर सिंह ए.आई.आर. 1952 एस.सी. 252 : 1952 एस.सी.आर. 1056; नगर निगम, मेरठ बनाम अल फहीम मीट एक्सपोर्टर्स (प्रा.) लि. एवं अन्य (2006) 13 एस.सी.सी. 382 : 2006 (10) सप्ल. एस.सी.आर. 354 – संदर्भित।

न्यायनिर्णय संदर्भ

ए.आई.आर. 1921 पी.सी. 240 भरोसा किया कंडिका 27

1982 (1) एस.सी.आर. 629	भरोसा किया	कंडिका 28
1967 एस.सी.आर. 720	भरोसा किया	कंडिका 29
2002 (2) एस.सी.आर. 945	भरोसा किया	कंडिका 30
1987 (3) एस.सी.आर. 317	भरोसा किया	कंडिका 31
1988 (3) एस.सी.आर. 62	संदर्भित	कंडिका 36
1984 (1) एस.सी.आर. 767	संदर्भित	कंडिका 37
2000 (3) एस.सी.आर. 1019	संदर्भित	कंडिका 38
1952 एस.सी.आर. 179	संदर्भित	कंडिका 41
1962 सप्ल. एस.सी.आर. 739	संदर्भित	कंडिका 42
2003 (2) एस.सी.आर. 653	संदर्भित	कंडिका 43
(2007) 2 एस.सी.सी. 230	संदर्भित	कंडिका 44
1964 एस.सी.आर. 673	संदर्भित	कंडिका 44
2003 (3) एस.सी.आर. 409	संदर्भित	कंडिका 44
2003 (1) एस.सी.आर. 634	संदर्भित	कंडिका 44
(2003) 1 एस.सी.सी. 123	संदर्भित	कंडिका 44
2002 (5) सप्ल. एस.सी.आर. 522	संदर्भित	कंडिका 44
2009 (16) एस.सी.आर. 111	भरोसा किया	कंडिका 47
2011 (6) एस.सी.आर. 403	संदर्भित	कंडिका 48
1952 एस.सी.आर. 1056	संदर्भित	कंडिका 50
2006 (10) सप्ल. एस.सी.आर. 354	संदर्भित	कंडिका 50

दीवानी मूल क्षेत्राधिकार : रिट याचिका (दीवानी) सं. 223 सन् 2009।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत।

साथ में

सन् 2014 की दीवानी अपीलें सं. 11037, 11038 तथा 11039।

मुकुल रोहतगी, ए.जी., सुब्रमोनियम प्रसाद, ए.ए.जी., सी.यू. सिंह, वी. गिरी, रवींद्र श्रीवास्तव, सी.ए. सुंदरम, वरीय अधिवक्ता, बी. रघुनाथ बसंत, सुश्री लिज मैथ्यू, सुश्री श्रुति अय्यर, निखिल नायर, अंबुज अग्रवाल, धनंजय बैजल, सुश्री अकांक्षा, के.एस. नटराजन, वी. रामसुब्रमणियन, जयंत मुथ राज, श्रीमती मालविका जे., सुरेशन पी., बी. बालाजी, आर. राकेश शर्मा, सुश्री आर. शासे, परमवीर, राजीव दलाल, एस. थनंजयन, टी. हरिश कुमार, वी.एन. रघुपति उपस्थित पक्षकारों के लिए।

न्यायालय का निर्णय निम्न न्यायमूर्ति द्वारा प्रतिपादित

दीपक मिश्रा, न्यायमूर्ति 1. सभी विशेष अनुमति याचिकाओं में अनुमति प्रदान की जाती है।

2. वर्तमान अपीलों का समूह मिलीभगतपूर्ण रियायतों, कुशलताहीन कुप्रस्तुतियों, योजनाबद्ध वार्ताओं तथा वित्तीय नैतिकता पर धोखे के आरोपण की श्रृंखला चित्रित करता है तथा आगे यह भी उदाहरण प्रस्तुत करता है कि विधिक निगम अपनी रुचियों जिसका मूलतः सामूहिक रुचि है जिसकी सुरक्षा, संरक्षण तथा दावा करने के लिए निगम कर्तव्यबद्ध हैं को अपमानजनक दफनाने की प्रवृत्ति कैसे विकसित कर सकते हैं। उसके अलावा यह समूह यह भी उजागर करता है जैसा कि हमने दुखद रूप से लिखा है कि राज्य जो नागरिकों की रुचि का संरक्षक है ने लगातार स्फिंक्स-सदृश मौन बनाए रखा है तथा कुछ अगम्य कारण से वित्तीय कदाचारों को एक विशाल मौन दर्शक के रूप में कुशलतापूर्वक नजरअंदाज किया है। ऐसा प्रतीत होता है सभी ने या तो वाक्पटुता से अथवा मौन रूप से एक-दूसरे से विधि का स्मृति-पट्ट लिखने में प्रतिस्पर्धा की है। किन्तु एक सजग प्रहरी है रिट याचिका (दीवानी) सं. 223/2009 का याचिकाकर्ता जो व्यक्तिगत रुचि से बंधा होने के बावजूद प्रतिवादी सं. 3 से 8 तथा महानगरीय परिवहन निगम (चेन्नई) लिमिटेड (एम.टी.सी.एल.) द्वारा अपनाई गई मशीनरी को उजागर करना उचित समझा जिसने एस.एल.पी. (दीवानी) सं. 16908/2006

के.एस. कुमार राजा एवं अन्य के विरुद्ध दायर की थी तथा बाद में उसे दबाने का चुनाव किया। दुखद असामान्य बात को होने दिया गया है।

3. मुकदमेबाजी का इतिहास है। एम.टी.सी.एल. ने कुछ बस आश्रयों के निर्माण तथा अनुरक्षण के लिए दोनों प्रकाशित तथा अप्रकाशित विज्ञापन जारी किए तथा उक्त विज्ञापन के जवाब में एम/एस. एम एसोसिएट्स ने प्रथम उत्तरदाता से प्रायोजक आधार पर “निर्माण, संचालन तथा हस्तांतरण” पर बस आश्रयों के निर्माण तथा अनुरक्षण का कार्य लेने के लिए संपर्क किया। यह पहले आओ पहले पाओ के सिद्धांत पर आधारित था। विशिष्ट क्षेत्र रिट याचिका के उत्तरदाताओं के पक्ष में आवंटित किए गए थे जिन्होंने विशेष अनुमति द्वारा अपीलें भी अधिमानित की हैं। एम.टी.सी.एल. द्वारा प्रायोजकों के साथ प्रवेश किया गया करार एक वर्ष के लिए वैध रहना था इस अधिरोपण के साथ कि वह अगले नौ वर्षों के लिए प्रत्येक वर्ष नवीकृत किया जाएगा प्रायोजकों के निष्पादन तथा करार की सभी शर्तों एवं नियमों के एम.टी.सी.एल. की पूर्ण संतुष्टि के लिए अनुपालन के अधीन। चेन्नई शहर में बस आश्रयों के निर्माण तथा अनुरक्षण के लिए अन्य प्रायोजकों के साथ भी समान प्रायोजक करार प्रवेश किए गए थे। सन् 2003 में प्रायोजक करार से संबंधित विभिन्न विवाद उत्पन्न होने पर रिट याचिका के उत्तरदाता सं. 3 से 8 ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार का आह्वान किया। उक्त रिट याचिकाएँ लंबित होने के दौरान रिट याचिका के नवम उत्तरदाता के.एस. कुमार राजा ने भी उच्च न्यायालय के समक्ष बस आश्रयों के निर्माण तथा अनुरक्षण के लिए संविदा आवंटन में एम.टी.सी.एल. के प्राधिकार को चुनौती देते हुए रिट याचिका अधिमानित की।

4. सभी रिट याचिकाओं से निपटते हुए उच्च न्यायालय ने दिनांक 5.9.2006 को साझा आदेश पारित किया। यह भी उल्लेखनीय है, रिट याचिका के साथ कुछ रिट अपीलें भी उच्च न्यायालय द्वारा निपटाई गईं। उच्च न्यायालय ने डब्ल्यू.पी.(दीवानी) सं. 318/2004 के तथ्यों का उल्लेख किया जो के.एस. कुमार राजा द्वारा दायर की गई थी जो सिटी एडवर्टाइजिंग

सिस्टम्स, चेन्नई का एकमात्र स्वामी है जिसने दैनिक समाचार पत्र दीना भूमि में प्रकाशित दिनांक 31.3.2003 की निविदा अधिसूचना पर प्रश्न उठाया था। उक्त निविदा अधिसूचना द्वारा एम.टी.सी.एल. ने चेन्नई शहर के भीतर सड़क किनारों पर बस आश्रयों के निर्माण के लिए इच्छुक खरीदारों से निविदाएँ आमंत्रित की थीं। उक्त के.एस. कुमार राजा ने डब्ल्यू.पी. सं. 34872/2003 भी अधिमानित की थी जिसमें चेन्नई नगर निगम के आयुक्त (निगम के लिए संक्षिप्त) के दिनांक 7.11.2003 के आदेश की विधिक स्वीकार्यता पर प्रश्न उठाया गया था जिसमें उसे सूचित किया गया था कि चेन्नई शहर में बस आश्रयों का निर्माण तथा अनुरक्षण एम.टी.सी.एल. द्वारा निपटाया जा रहा है तथा इसलिए उसे उक्त प्राधिकारी से संपर्क करना चाहिए। उच्च न्यायालय के समक्ष अभिकथन किया गया था कि यात्रियों की सुविधा के लिए बस आश्रय प्रदान करना निगम का दायित्व है। अभिवचन किया गया था कि प्रारंभ में विभिन्न बस स्टॉप पहचाने गए तथा पहले आओ पहले पाओ आधार पर आवंटित किए गए तथा परिणामस्वरूप सफल निविदादाता के लिए रॉयल्टी योजना के अंतर्गत आश्रय निर्माण की अनुमति भी प्रदान की गई। रिट याचिकाकर्ता ने उत्तरदाता निगम को आश्रय स्थापना के लिए विनिर्दिष्ट स्थान के आवंटन के लिए आवेदन प्रस्तुत किया किन्तु उसने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। स्मरण-पत्र भी बहरा कानों पर पड़े। उक्त अनुक्रिया न होने से क्षुब्ध होकर उसने डब्ल्यू.पी. सं. 26890/2003 में उच्च न्यायालय से संपर्क किया जिसमें निगम को उसके अभ्यावेदन पर विचार करने का निर्देश देने की प्रार्थना की गई तथा उच्च न्यायालय ने निगम को अभ्यावेदन पर विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर उचित आदेश पारित करने का निर्देश दिया। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में निगम ने 7.11.2003 को उसे सूचित किया कि चेन्नई शहर में आश्रय का निर्माण तथा अनुरक्षण एम.टी.सी.एल. द्वारा निपटाया जा रहा है। उस जंक्शन पर एम.टी.सी.एल. ने निविदाएँ आमंत्रित कीं जिसने उसे उक्त आदेश पर प्रहार करते हुए रिट याचिका दायर करने के लिए बाध्य किया।

5. उच्च न्यायालय के समक्ष अभिकथन किया गया था कि एम.टी.सी.एल. को चेन्नई शहर नगर निगम अधिनियम, 1919 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 285 में निहित प्रावधानों के अनुसार स्वयं बस आश्रय निर्माण करने अथवा प्रायोजकों को निर्माण के लिए अनुमति देने का कोई क्षेत्राधिकार/प्राधिकार नहीं है। निगम ने अपना प्रतिशपथ-पत्र दायर किया जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ अभिकथन किया कि सरकार ने जी.ओ.एमएस. सं. 14, नगर प्रशासन तथा जल आपूर्ति विभाग दिनांक 11.1.1983 में एम.टी.सी.एल. को यात्रियों के लिए बस आश्रय प्रदान करने तथा उनका अनुरक्षण करने की अनुमति दी थी तथा इसलिए उसके पास प्राधिकार है। इस प्रकार निगम ने सरकार द्वारा जारी उक्त अधिसूचना के आधार पर ही एम.टी.सी.एल. के प्राधिकार को स्वीकार किया। उच्च न्यायालय ने अधिनियम के अंतर्गत सक्षम प्राधिकारी के संबंध में जो यात्रियों के लिए बस आश्रय निर्माण करने अथवा उक्त उद्देश्य के लिए व्यवस्था में प्रवेश करने का हकदार है स्वयं को संबोधित किया। अधिनियम के प्रावधानों की जांच करने तथा प्रशासनिक निर्देशों की सराहना करने पर उसने अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम के किसी प्रावधान से सरकार को ऐसी अधिसूचना जारी करने की शक्ति नहीं प्रदान की गई है; कि सरकार आदेश पर रखा गया भरोसा अस्वीकार्य है; कि सड़क किनारा सार्वजनिक सड़कों के किनारे सहित निगम द्वारा नियंत्रित तथा प्रबंधित किया जाना चाहिए क्योंकि वे उसके पास निहित हैं; कि एम.टी.सी.एल. को किसी प्रायोजक को बस आश्रय निर्माण अथवा प्रकाशित करने की अनुमति देने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं है; कि आयुक्त द्वारा पारित आदेश जिसमें उसमें याचिकाकर्ता को एम.टी.सी.एल. से संपर्क करने की अपेक्षा की गई थी अनुचित था तथा उसे निरस्त किया जाना चाहिए था; कि एम.टी.सी.एल. द्वारा जारी निविदा अधिसूचना विधिक रूप से अस्थिरणीय थी; तथा कि एम.टी.सी.एल. को आवंटन प्रदान करने अथवा निरस्त करने की कोई शक्ति नहीं है। इस दृष्टिकोण से होने के कारण उच्च न्यायालय ने प्रायोजकों द्वारा दायर रिट याचिकाएँ खारिज कर दीं तथा के.एस. कुमार राजा द्वारा दायर रिट याचिकाएँ स्वीकार कर लीं। यहां यह

उल्लेखनीय है कि उच्च न्यायालय ने कुछ निर्देश जारी किए थे जिन्हें हम पुनरुत्पादित करना उचित समझते हैं:

"(i) चेन्नई निगम का आयुक्त बस आश्रयों के निर्माण के लिए सड़क किनारों की पहचान करेगा तथा उक्त उद्देश्य के लिए वह महानगरीय परिवहन निगम (चेन्नई) लिमिटेड की राय/सलाह ले सकता है;

(ii) बस आश्रयों के निर्माण के लिए स्थान की ऐसी पहचान पर चेन्नई निगम का आयुक्त इच्छुक प्रायोजकों से निविदाएँ आमंत्रित करेगा;

(iii) निगम परिषद यह संकल्प करने का भी हकदार है कि महानगरीय परिवहन निगम (चेन्नई) लिमिटेड को बस आश्रयों को स्थापित करने तथा उनका अनुरक्षण करने की अनुमति दी जाए तथा ऐसी स्थिति में महानगरीय परिवहन निगम (चेन्नई) लिमिटेड स्थानों की पहचान करेगा तथा परिषद द्वारा अधिरोपित शर्तों एवं नियमों के आधार पर बस आश्रय निर्माण करेगा।

(iv) उपर्युक्त अभ्यास अर्थात् स्थान की पहचान करना तथा स्वयं विज्ञापन करना अथवा महानगरीय परिवहन निगम (चेन्नई) लिमिटेड को बस आश्रय निर्माण करने के लिए पूर्णतः छोड़ देना निगम द्वारा दिसम्बर 2006 के अंत से पूर्व या उससे पहले कार्यान्वित किया जाएगा।

(v) तब तक याचिकाकर्ता अर्थात् प्रायोजक स्थापित आश्रयों के संबंध में अपनी गतिविधियाँ जारी रखने के हकदार हैं 20 x 4 आकार के आश्रयों के एक मॉड्यूल के लिए प्रति आश्रय 49,500/- रु. के भुगतान के अधीन तथा 40 x 4 आश्रयों वाले द्वितीय मॉड्यूल के लिए 99,000/- रु. की राशि के।

(vi) उपर्युक्त राशि चेन्नई निगम को पूर्णतः अग्रिम में इस आदेश की प्रति सहित अदा की जाएगी। ऐसे भुगतान पर चेन्नई निगम का आयुक्त याचिकाकर्ता को दिसम्बर 2006 के अंत तक अपना व्यवसाय जारी रखने की अनुमति देगा।

(vii) यह स्पष्ट किया जाता है कि उपर्युक्त व्यवस्था मूलतः यात्रियों के हित में ही की गई है क्योंकि उन्हें आश्रय प्रदान किया जाना चाहिए तथा आश्रय हटाना न तो रिट याचिकाकर्ताओं के हित में होगा न महानगरीय परिवहन निगम (चेन्नई) लिमिटेड के न सामान्य रूप से यात्रियों के। इसलिए आयुक्त को इस आदेश में विनिर्दिष्ट समय-सीमाओं का कड़ाई से पालन करना चाहिए निर्णय लेने के लिए चाहे स्वयं विज्ञापन करने के लिए अथवा पूर्ण मामला परिवहन निगम को छोड़ने के लिए प्रायोजकों तथा परिवहन निगम दोनों द्वारा संविदा से उत्पन्न उनके संबंधित दावे उचित मंच के समक्ष समाधान के लिए खुले छोड़े जाते हैं।"

6. उक्त आदेश को चुनौती देते हुए क्षुब्ध पक्षकारों ने विभिन्न विशेष अनुमति याचिकाएँ दायर कीं तथा पहले कहा जा चुका है एम.टी.सी.एल. ने भी विशेष अनुमति याचिका दायर की थी। इस न्यायालय ने प्रारंभ में नोटिस जारी किया तथा अंतरिम आदेश पारित किया किन्तु उसके बाद विशेष अनुमति याचिकाओं की लंबितता के दौरान एम.टी.सी.एल. तथा क्षुब्ध संविदाकारी पक्षकारों ने निपटान में प्रवेश किया। पक्षकारों के बीच प्रवेश किया गया निपटान पुनरुत्पादित करना आवश्यक है:

“(1) कि पक्षकार विगत सभी विवादों तथा उनके पारस्परिक दावों को विवादित अवधि: 01.02.2003 से 31.03.2005 के संबंध में मध्यस्थता के लिए निर्देशित करेंगे। 01.04.2005 के बाद किए गए सभी भुगतान याचिकाकर्ताओं द्वारा दावा की गई तत्कालीन वर्तमान बकायों के विरुद्ध समायोजित किए जाएँगे।

(2) कि एस.एल.पी. (दीवानी) सं. 276 तथा एस.एल.पी. (दीवानी) सं. 852 सन् 2007 का याचिकाकर्ता 500 आश्रयों का हकदार होगा तथा उन्हें 12 वर्ष की अनुज्ञप्ति अवधि प्रदान की जाएगी आगे विस्तार सहित इस शर्त पर कि सूची के अनुसार पूरे 500 आश्रयों को आदेश की तिथि से 13 माह की अवधि के भीतर

अंतर्राष्ट्रीय मानक बस आश्रयों में परिवर्तित किया जाएगा जिसमें प्रति आश्रय 30 वर्ग मीटर से अधिक न होने वाला विज्ञापन स्थान होगा।

(3) इस अवधि के लिए देय अनुज्ञप्ति शुल्क 30,000/- रु. प्रति वर्ष होगा जिसमें प्रत्येक तीन वर्ष में एक बार 10% की वृद्धि होगी अंतर्राष्ट्रीय मानक बस आश्रयों के निर्माण में संलग्न बड़ी निवेश पर विचार करते हुए।”

7. उक्त समझौते के आधार पर मामले को सूचीबद्ध करने की प्रार्थना की गई तथा तदनुसार दिनांक 30.06.2008 को आदेश पारित किया गया जो निम्नानुसार है:

“एस.एल.पी. (सी) सं. 276/07 तथा एस.एल.पी. (सी) सं. 852/07 जो क्रमशः एम एसोसिएट लि. तथा एम/एस फ्रंट लाइन मीडिया आदि द्वारा दायर की गई हैं उल्लेख पर विचार के लिए ली जाती हैं। एस.एल.पी. (सी) सं. 276/07 में दायर आई.ए. सं. 3/08 तथा एस.एल.पी. (सी) 852/07 में आई.ए. सं. 2/08 के दृष्टिगत जिसमें उल्लेख किया गया है कि मामला पक्षकारों के बीच निपटाया गया है जिसकी शर्तें उक्त आवेदनों से संलग्न मेमो के रूप में दायर की गई हैं हम दोनों विशेष अनुमति याचिकाओं का निपटारा निम्नलिखित आदेश द्वारा करते हैं।

याचिकाकर्ता तथा उत्तरदाता महानगरीय परिवहन निगम द्वारा हस्ताक्षरित ज्ञापांक याचिकाकर्ता के शपथ-पत्र तथा महानगरीय परिवहन निगम के प्रबंध निदेशक श्री रामसुब्रमणियन के शपथ-पत्र द्वारा विधिवत समर्थित जो संबद्ध एस.एल.पी.(सी) सं. 16908 सन् 2006 में दायर किया गया है अभिलेख पर लिया जाता है तथा ये विशेष अनुमति याचिकाएँ उक्त मेमो की शर्तों के अनुसार निपटाई जाती हैं।

पक्षकार इन कार्यवाहियों में अपनी-अपनी लागत वहन करेंगे।

महानगरीय परिवहन निगम, चेन्नई, लिमिटेड द्वारा दायर एस.एल.पी. (सी) सं. 16908/06 भी उसमें दायर आई.ए. सं. 2/08 सहित विचार के लिए ली जाती है। उपर्युक्त पहले दो विशेष अनुमति याचिकाओं में पारित आदेश के दृष्टिगत इस विशेष अनुमति याचिका में कोई आदेश आवश्यक नहीं है। विशेष अनुमति याचिका तदनुसार निपटाई जाती है तथा याचिका में उठाया गया विधि प्रश्न उचित कार्यवाही में निर्णय के लिए खुला छोड़ा जाता है।”

8. यह भी उल्लेखनीय है, उक्त समझौता में चेन्नई नगर निगम पक्षकार नहीं था। इसके लिए सुलैमान की बुद्धि की आवश्यकता नहीं है कि ऐसे समझौता से निगम की रुचि गंभीर रूप से प्रभावित हुई क्योंकि उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से राय दी थी कि अधिनियम में निहित प्रावधानों के अनुसार सार्वजनिक सड़कों पर नियंत्रण रखना निगम के प्राधिकार के भीतर है।

9. इस मोड़ पर, यह उचित है उल्लेख करना कि विशेष अनुमति याचिकाओं की लंबितता के दौरान अपीलकर्ताओं तथा एम.टी.सी.एल. के बीच समझौता में प्रवेश किया गया तथा पहले कहा जा चुका है न्यायालय ने दिनांक 30.6.2008 को समझौता के आधार पर मामले का निपटारा किया। इस चरण में हम एम/एस. मेट्रो मल्टीमीडिया जो एम/एस. एम एसोसिएट्स, एम/एस. फ्रंट लाइन मीडिया, एम/एस. ग्रेफाइट पब्लिसिटीज, एम/एस. एस.एस. इंटरनेशनल, एम/एस. वैष्णवी इमेजेस तथा एम/एस. व्हाइट हॉर्स कम्युनिकेशंस नेटवर्क द्वारा नियंत्रित फर्म है के साथ एम.टी.सी.एल. द्वारा दिनांक 24.09.2008 को प्रवेश किए गए समझौता का उल्लेख करना उचित समझते हैं। उक्त समझौतों का उल्लेख अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह पक्षकारों के आचरण पर अपार प्रकाश डालता है। उक्त समझौतों से प्रासंगिक खंड निम्नानुसार हैं:

“तथा जबकि एम.टी.सी.एल. ने फर्मों को विभिन्न बस आश्रयों के निर्माण के लिए व्यक्तिगत समझौते में प्रवेश करके अनुमति दी थी।

तथा जबकि फर्मों तथा एम.टी.सी.एल. के बीच 2003 से 2005 की अवधि के लिए रॉयल्टी राशियों के भुगतान से संबंधित मुद्दों के संदर्भ में जारी रखने के कुछ विधिक अधिकारों के संबंध में विवाद उत्पन्न हुआ।

तथा जबकि दोनों एम.टी.सी.एल. तथा फर्मों ने मद्रास उच्च न्यायालय के माननीय द्वारा विधिक कार्यवाहियों के निपटारे के पश्चात् भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अपने-अपने अधिकारों का विधिवत आंदोलन किया।

तथा जबकि समस्त मुद्दों पर विचार करते हुए यहां के सभी पक्षकार ऐसे अन्य शर्तों एवं नियमों पर उचित समझौता प्राप्त करने के लिए सहमत हुए तथा भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अपने विगत विवाद को एक बार सदैव के लिए समाधान करने के लिए सहमत हुए।

तथा जबकि भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एस.एल.पी.(सी) सं. 16908/2006, 276/2007 तथा 852/2007 में दिनांक 30 जून 2008 को आदेश पारित किए जिसमें मेमो में वर्णित शर्तों को अभिलेखित किया तथा दोनों एम.टी.सी.एल. तथा फर्मों को उक्त आदेश कार्यान्वित करने की अनुमति दी तथा भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष लंबित सभी मामलों का निस्तारण किया।

यह कि माननीय भारत के सर्वोच्च न्यायालय के एसएलपी(सी) सं. 16908/2006, 276/2007 और 852/2007 में पारित आदेशों के अनुपालन में एम.टी.सी.एल. रियायतग्राही को 500 बस शेल्टरों का आवंटन करने पर सहमत है, ताकि अंतरराष्ट्रीय मानक के बस शेल्टरों का स्थापन/पुनःस्थापन प्रतीक्षारत बस यात्रियों के लाभ के लिए किया जा सके, और रियायतग्राही वहां, जहां बस शेल्टर उपलब्ध नहीं हैं, अंतरराष्ट्रीय मानक के बस शेल्टरों में परिवर्तन करने पर सहमत है। रियायतग्राही उपर्युक्त बस शेल्टरों को अपने व्यय पर स्थापित करने पर सहमत है और इसके प्रतिफल में यहां आगे उल्लिखित दरें पर रॉयल्टी राशि का भुगतान करने पर सहमत है।

XXXX

XXXX

XXXX

रियायतग्राही 12 वर्षों की अवधि के दौरान एम.टी.सी.एल. को रॉयल्टी राशि का भुगतान करने पर सहमत है। रॉयल्टी राशि प्रति वर्ष प्रति अंतरराष्ट्रीय मानक बस शेल्टर रु.30000/- की दर से देय होगी, जिसमें प्रत्येक तीन वर्षों में पूर्व दर पर 10% की वृद्धि होगी। समझौते की अवधि तथा रॉयल्टी भुगतान 01.09.2008 से प्रारंभ होंगे।

XXXX

XXXX

XXXX

यह समझौता 01.09.2008 से 12 वर्षों के लिए वैध होगा, तथा इस शर्त पर आगे विस्तार किया जाएगा कि सूची के अनुसार सभी 500 बस शेल्टर 01.09.2008 से 12 महीनों के भीतर अंतरराष्ट्रीय मानक बस शेल्टरों में परिवर्तित किए जाएंगे, जिनमें विज्ञापन स्थान प्रति शेल्टर 30 वर्ग मीटर से अधिक नहीं होगा।”

10. जैसा कि तथ्यात्मक परिदृश्य उभरता है, मैसर्स नोवा ऐड्स ने इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अनेक आधारों पर पुनः आह्वान किए जाने हेतु रिट याचिका (दीवानी) सं. 223/2009 दायर की। 11.01.2011 को निम्नलिखित आदेश पारित किया गया:

“यह रिट याचिका इस न्यायालय द्वारा 30 जून 2008 को एसएलपी (दीवानी) सं. 16908/2006 में पारित आदेश के पुनः आह्वान के लिए दायर की गई है, जो मेट्रोपोलिटन ट्रांसपोर्ट कॉरपोरेशन द्वारा के.एस. कुमार राजा एवं एक अन्य के विरुद्ध दायर की गई थी, साथ ही कुछ निजी पक्षकारों, अर्थात् एआईएम एसोसिएट्स लिमिटेड तथा एम/एस फ्रंट लाइन मीडिया आदि द्वारा दायर दो अन्य विशेष अनुमति याचिकाओं के साथ।

2. उक्त आदेश के माध्यम से, पक्षकारों द्वारा यह निवेदन किए जाने पर कि उनके बीच समझौता हो गया है, हमने ऐसी प्रस्तुतियों के आधार पर विशेष अनुमति याचिकाओं का निस्तारण कर दिया था।

3. इस रिट याचिका में यह इंगित किए जाने का प्रयास किया गया है कि उक्त आदेश उसी विषय में पारित एक पूर्ववर्ती आदेश के बावजूद पारित किया गया था।

4. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के पश्चात्, तथा विशेष रूप से श्री मोहन परासरन, विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल को सुनने के पश्चात्, कि विशेष अनुमति याचिकाओं का विषय 500 बस शेल्टरों तक सीमित था, जिनमें से अनेक शेल्टर पहले ही बड़े पैमाने पर निर्मित किए जा चुके थे, हम 30 जून 2008 को पूर्व में पारित अपने आदेश को पुनः आह्वान करते हैं तथा सभी तीनों विशेष अनुमति याचिकाओं को पुनः फाइल पर बहाल करते हैं। तथापि, हम यह भी स्पष्ट करते हैं कि उक्त आदेश उस समय

पक्षकारों के बीच हुए समझौते के आधार पर पारित किया गया था। हम यह भी स्पष्ट करते हैं कि उक्त आदेश के आधार पर अब तक जो भी कदम उठाए गए हैं, वे विशेष अनुमति याचिकाओं के अंतिम परिणाम के अधीन रहेंगे।

5. यह आदेश विशेष अनुमति याचिकाओं की सुनवाई के समय पक्षकारों के अधिकारों एवं दलीलों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना पारित किया जाता है।

7. अतिरिक्त दस्तावेज दायर करने की स्वतंत्रता दी जाती है।”

11. समझौते की शर्तों की ओर पुनः लौटने पर, यह स्पष्ट रूप से प्रत्यक्ष है कि उसमें उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश तथा दिनांक 30.6.2008 के उस आदेश का उल्लेख है, जिसमें इस न्यायालय ने समझौते को अभिलेखित किया है। उच्च न्यायालय ने निर्विवाद रूप से यह अभिनिर्धारित किया था कि एम.टी.सी.एल. को बस शेल्टरों के संबंध में किसी भी प्रकार का समझौता करने का कोई अधिकार नहीं है और विधि के अंतर्गत केवल निगम को ही अधिकार प्राप्त है। चेन्नई निगम समझौते का पक्षकार नहीं था। यह ध्यान देने योग्य है कि समझौते में अंतर्विष्ट शर्तों से ऐसा परिलक्षित होता है मानो इस प्रकार का समझौता करने का निर्देश इस न्यायालय द्वारा दिया गया हो। चिंताजनक पक्ष यह है कि एम.टी.सी.एल. ने निविदाएँ आमंत्रित किए बिना छह फर्मों के संघ के साथ ऐसा समझौता किया है, जो 12 वर्षों तक वैध रहना है। ये तथ्य न केवल अत्यंत भ्रमित करने वाले हैं, बल्कि वास्तव में स्तब्ध कर देने वाले हैं।

12. इस पृष्ठभूमि में, सर्वप्रथम जिस मूलभूत प्रश्न पर विचार किया जाना आवश्यक है, वह यह है कि अधिनियम के अंतर्गत यात्रियों के लिए बस शेल्टरों से संबंधित कार्यवाही करने का अधिकार निगम को है अथवा एम.टी.सी.एल. को। विभिन्न अपीलों में विभिन्न पक्षों की ओर

से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सी. ए. सुंदरम, श्री वी. गिरी तथा श्री रवींद्र श्रीवास्तव यह प्रतिपादित करते हैं कि उच्च न्यायालय अधिनियम के उपबंधों की व्याख्या में त्रुटि कर बैठा है और उसने गलत रूप से यह निष्कर्ष निकाला है कि यात्रियों को शेल्टर उपलब्ध कराने तथा किसी भी वाणिज्यिक उपक्रम के लिए शेल्टरों से संबंधित अधिकारों का प्रयोग करने का अधिकार निगम को है, तथा यह कि परिवहन उपक्रमों का नियंत्रण एवं प्रबंधन निगम द्वारा किया जाना है और एम.टी.सी.एल. को बस शेल्टरों की स्थापना की अनुमति प्रदान करने अथवा किसी भी प्रकार से उनसे संबंधित कार्यवाही करने का कोई अधिकार नहीं है। इसके अतिरिक्त उनके द्वारा यह भी आग्रह किया गया है कि उच्च न्यायालय इस तथ्य पर ध्यान देने में विफल रहा है कि जिस समय राज्य सरकार ने एम.टी.सी.एल. को इस विषय से निपटने की शक्ति प्रदान की थी, उस समय निगम अधिस्थगन (सुपरसेशन) के अधीन था और इस कारण राज्य सरकार को निगम की ओर से कार्य करने तथा शक्ति/अधिकार को एम.टी.सी.एल. को प्रत्यायोजित करने का अधिकार प्राप्त था और, अतः, इस संबंध में की गई कार्यवाही में कोई अवैधता नहीं थी। उपरोक्त दलीलों का प्रतिवाद करते हुए, विद्वान महाधिवक्ता श्री रोहतगी द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि उच्च न्यायालय द्वारा किया गया विश्लेषण दोषपूर्ण नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि वह व्याख्या के सिद्धांतों के अनुरूप है। इसी प्रकार का निवेदन तमिलनाडु राज्य की ओर से विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री सुब्रमणियम प्रसाद तथा रिट याचिकाकर्ताओं की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री सी. यू. सिंह द्वारा भी किया गया है। जहाँ तक राज्य सरकार के अधिकार का प्रश्न है, उनके द्वारा यह आग्रह किया गया है कि जिस समय अधिसूचना जारी की गई थी, उस समय निर्वाचित निकाय अस्तित्व में आ चुका था और, इसलिए, राज्य सरकार निगम की ओर से कार्य नहीं कर सकती थी।

13. विवाद को समझने के लिए कुछ वैधानिक उपबंधों का संदर्भ आवश्यक है। धारा 2(6) तथा 2(7), जो क्रमशः कैरिज और कार्ट को परिभाषित करती हैं, इस प्रकार हैं:

“कैरिज” — “कैरिज” का अर्थ है स्प्रिंगों या स्प्रिंगों के रूप में कार्य करने वाले अन्य उपकरणों से युक्त कोई भी पहियों वाला वाहन और इसमें किसी भी प्रकार की साइकिल, ट्राइसाइकिल, रिक्शा तथा पालकी सम्मिलित हैं, किंतु इसमें मोटर वाहन अधिनियम, 1939 (केंद्रीय अधिनियम IV of 1939) के अर्थ में कोई भी मोटर वाहन सम्मिलित नहीं है।

“कार्ट” — “कार्ट” में कोई भी पहियों वाला वाहन सम्मिलित है जो कैरिज नहीं है, किंतु इसमें मोटर वाहन अधिनियम, 1939 (केंद्रीय अधिनियम IV of 1939) के अर्थ में कोई भी मोटर वाहन सम्मिलित नहीं है।

14. उक्त परिभाषाओं को दृष्टि में रखते हुए, अब हम अधिनियम के कुछ अन्य उपबंधों पर विचार करेंगे। अधिनियम का अध्याय IX सार्वजनिक सड़कों से संबंधित है। धारा 203 इस प्रकार है:

“203. सार्वजनिक सड़कों तथा उनके उपांगों का निगम में निहित होना—

(1) नगर की सभी सार्वजनिक सड़कें, जो केंद्र सरकार या राज्य सरकार के नियंत्रण में आरक्षित नहीं हैं, उनके फुटपाथ, पत्थर तथा अन्य सामग्री सहित, तथा ऐसी सड़कों के लिए उपलब्ध कराए गए सभी कार्य, सामग्री, उपकरण तथा अन्य वस्तुएँ, सभी नालियाँ, जल-निकास कार्य, सुरंगें और पुलियाएँ, चाहे वे नगरपालिका निधि की लागत से बनाई गई हों या अन्यथा, किसी भी सड़क के साथ, उसके किनारे या उसके नीचे, चाहे वह सार्वजनिक हो या निजी, तथा उनसे संबंधित सभी कार्य, सामग्री, उपकरण और अन्य वस्तुएँ, और सार्वजनिक सड़कों पर या उनके किनारे उगने वाले वे सभी वृक्ष जो निजी संपत्ति नहीं हैं, निगम में निहित होंगे।

(2) राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा ऐसी किसी भी सड़क, नाली, जल-निकास कार्य, सुरंग, पुलिया या वृक्ष को निगम के नियंत्रण से वापस ले सकती है।”

15. उपर्युक्त उपबंधों से यह पूर्णतः स्पष्ट है कि सभी सार्वजनिक सड़कें तथा उनके उपांग, जो केंद्र सरकार या राज्य सरकार के नियंत्रण में आरक्षित नहीं हैं, निगम में निहित होंगे। अतः उपबंध के अंतर्गत किया गया आरक्षण केवल केंद्र सरकार या राज्य सरकार के लिए ही अभिप्रेत है। धारा 203 की उपधारा (2) राज्य सरकार को यह अधिकार प्रदान करती है कि वह अधिसूचना जारी कर किसी भी सड़क, नाली, जल-निकास, सुरंग, पुलिया या वृक्ष को निगम के नियंत्रण से वापस ले सके। श्री रोहतगी द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि अधिनियम की धारा 203(1) कुछ सड़कों को अपवर्जित करते हुए, शेष सभी को निगम में निहित करती है। विधायिका द्वारा राज्य सरकार को यह शक्ति प्रदान की गई है कि वह कुछ सड़कों और अन्य वस्तुओं को निगम के नियंत्रण से वापस ले सके, क्योंकि विधायिका ने अपनी विवेकपूर्ण समझ में धारा 203(1) से एक अपवाद निर्मित करना उपयुक्त समझा है और अधिसूचना जारी किए जाने के पश्चात राज्य को उससे निपटने हेतु सक्षम किया है। जैसा कि हम उक्त उपबंध को समझते हैं, वे सार्वजनिक सड़कें जो निगम में निहित की गई हैं, जब तक कि वे केंद्र सरकार या राज्य सरकार के लिए आरक्षित न हों अथवा निगम के नियंत्रण से कुछ सड़कों और अन्य वस्तुओं को वापस लेने हेतु अधिसूचना जारी न की जाए, तब तक उन पर निगम का पूर्ण नियंत्रण रहेगा। यही उपरोक्त उपबंध का सर्वाधिक स्पष्ट अर्थ है, क्योंकि यह किसी अन्य व्याख्या को स्वीकार नहीं करता।

16. धारा 204 सड़कों के अनुरक्षण और मरम्मत से संबंधित है। यह इस प्रकार है:

“204. सड़कों का अनुरक्षण और मरम्मत – निगम यह सुनिश्चित करेगा कि सार्वजनिक सड़कों का अनुरक्षण और मरम्मत की जाए तथा उनमें ऐसे

सभी सुधार किए जाएँ जो सार्वजनिक सुरक्षा या सुविधा के लिए आवश्यक या उपयुक्त हों।”

17. उपर्युक्त उपबंध स्पष्ट रूप से यह परिकल्पित करता है कि सार्वजनिक सुरक्षा और सुविधा के लिए जो आवश्यक और उपयुक्त हों, उन सड़कों का अनुरक्षण, मरम्मत तथा सुधार करना निगम का कर्तव्य है। प्रमुख शब्द हैं “सुरक्षा” और “सुविधा” और यह निगम की जिम्मेदारी है।

18. धारा 214 सड़कों के उपांगों और सामग्रियों के संरक्षण का उपबंध करती है। इसमें यह उपबंधित है कि आयुक्त की अनुमति के बिना किसी भी व्यक्ति के लिए किसी सार्वजनिक सड़क की बाड़, खंभों, फर्श, पट्टिकाओं या अन्य सामग्रियों को हटाना, उखाड़ना या उनमें कोई परिवर्तन करना विधिसम्मत नहीं होगा। आयुक्त, यह कहने की आवश्यकता नहीं है, निगम का आयुक्त है। अतः यह स्पष्ट है कि आयुक्त की अनुमति के बिना कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता, क्योंकि सड़कों का अनुरक्षण करना निगम का कर्तव्य है और साथ ही यह भी उसका दायित्व है कि वह जनता की सुविधा सुनिश्चित करे।

19. धारा 214-ए असाधारण यातायात के कारण उत्पन्न व्ययों की वसूली के लिए निगम की शक्ति का उपबंध करती है। धारा 220 सड़कों में अवरोध के विरुद्ध निषेध से संबंधित है। उक्त उपबंध यह निर्धारित करता है कि कोई भी व्यक्ति किसी ऐसी सड़क या किसी ऐसे सार्वजनिक स्थान में या उसके ऊपर, जिसका नियंत्रण निगम में निहित है, कोई दीवार नहीं बनाएगा, न कोई बाड़ या अन्य कोई अवरोध या उभार स्थापित करेगा और न ही कोई अतिक्रमण करेगा। धारा 222 आयुक्त को निर्धारित प्रक्रिया का पालन करते हुए अतिक्रमण हटाने की शक्ति प्रदान करती है। धारा 223 कुछ उभारों और निर्माणों की अनुमति देने की शक्ति से संबंधित है। धारा 223-ए परिषद को होर्डिंग्स स्थापित करने और शुल्क अधिरोपित करने की शक्ति से संबंधित है। जैसा कि विद्वान महान्यायवादी ने इस प्रतिपादन को सुदृढ़ करने के लिए उक्त उपबंध को रेखांकित किया है कि बस आश्रयों तथा उन आश्रयों

पर लगाए गए होर्डिंग्स/विज्ञापनों से निपटने का अधिकार निगम का है, अतः उसे यथास्थान पुनरुत्पादित करना उपयुक्त है:

“223-ए. परिषद की होर्डिंग्स स्थापित करने और शुल्क अधिरोपित करने की शक्ति—

मद्रास ओपन प्लेसेज़ (विरूपण निवारण) अधिनियम, 1959 (1 का 1959) तथा इस अधिनियम की धारा 129-ए से 129-एफ के उपबंधों के अधीन, आयुक्त, परिषद की स्वीकृति के साथ, विज्ञापनों के प्रदर्शन के लिए, निगम के स्वामित्व में या निगम में निहित उपयुक्त स्थानों पर होर्डिंग्स, निर्माण या अन्य वस्तुएँ स्थापित कर सकता है और परिषद द्वारा इस प्रयोजन के लिए बनाए गए विनियमों द्वारा निर्धारित ऐसे शुल्क के भुगतान पर किसी भी व्यक्ति को ऐसी किसी होर्डिंग, निर्माण या वस्तु का उपयोग करने की अनुमति दे सकता है।

स्पष्टीकरण 1.— धारा 129-डी और 129-ई के प्रयोजनों के लिए, वह व्यक्ति जिसे इस धारा के अंतर्गत किसी होर्डिंग, निर्माण या वस्तु का उपयोग करने की अनुमति दी गई है, धारा 129-ए के अधीन उसके द्वारा देय विज्ञापन करों या ऐसी होर्डिंग, निर्माण या वस्तु पर उसके द्वारा प्रदर्शित विज्ञापनों के अतिरिक्त उत्तरदायी होगा।

स्पष्टीकरण 2.— संदेहों के निवारण के लिए, यह घोषित किया जाता है कि इस धारा के अंतर्गत किसी होर्डिंग, निर्माण या वस्तु का उपयोग करने के लिए किसी भी व्यक्ति द्वारा देय कोई भी शुल्क, ऐसे होर्डिंग, निर्माण या वस्तु का स्वामी या उसके अधिभोग में रहने वाला व्यक्ति माना जाएगा।”

20. उपर्युक्त उद्धृत उपबंध पर बल देते हुए, श्री रोहतगी द्वारा यह आग्रह किया गया है कि निगम के स्वामित्व में या निगम में निहित किसी उपयुक्त स्थान पर किसी भी विज्ञापन,

होर्डिंग्स, निर्माणों या अन्य वस्तुओं का प्रदर्शन परिषद द्वारा ही निपटाया जाना है और आयुक्त परिषद की स्वीकृति से ऐसे स्थान स्थापित कर सकता है तथा उक्त कार्य परिषद द्वारा इस प्रयोजन के लिए बनाए गए विनियमों के अनुसार निर्धारित ऐसे शुल्क के भुगतान पर ही किया जाना है। उनका निवेदन है कि विधायिका द्वारा यह शक्ति निगम को प्रदान की गई है और इसे किसी भी प्राधिकरण द्वारा निष्फल नहीं किया जा सकता।

21. इस संदर्भ में, अब अधिनियम की धारा 285 का उल्लेख करना उपयुक्त है। यह अवतरण स्थलों, कार्ट-स्टैंड आदि के उपबंध से संबंधित है। यह इस प्रकार है:—

“285. अवतरण स्थलों, कार्ट-स्टैंड आदि के उपबंध— (1) आयुक्त सार्वजनिक अवतरण स्थल, ठहराव स्थल, कार्ट-स्टैंड, पशुशाला और गोशाला का निर्माण कर सकता है या उपलब्ध करा सकता है और उनके उपयोग के लिए ऐसे शुल्क आरोपित और उद्धृत कर सकता है, जैसा कि स्थायी समिति द्वारा निर्धारित किया जाए।

स्पष्टीकरण— इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, कार्ट-स्टैंड में मोटर वाहन अधिनियम, 1939 के अर्थ के भीतर आने वाले मोटर वाहनों सहित गाड़ियों तथा पशुओं के लिए स्टैंड सम्मिलित होंगे।

(2) स्थायी समिति द्वारा ऐसे स्थान के उपयोग के लिए निर्धारित शुल्कों का एक विवरण उसके किसी स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर भाग में हिंदी और तमिल में प्रदर्शित किया जाएगा।

(3) आयुक्त ऐसे शुल्कों के संग्रह को एक समय में तीन वर्ष से अधिक की अवधि के लिए नहीं, उन शर्तों और परिस्थितियों पर, जिन्हें वह उपयुक्त समझे, ठेके पर दे सकता है।”

22. इस उपबंध का अपना विशिष्ट महत्व है। यह आयुक्त को सार्वजनिक अवतरण स्थानों, ठहराव स्थानों, गाड़ी-स्टैंड, पशु-शाला तथा गौ-शाला के निर्माण अथवा उपलब्ध कराने

और उनके उपयोग के लिए शुल्क अधिरोपित करने एवं वसूल करने का अधिकार प्रदान करता है, जो शुल्क निगम की स्थायी समिति द्वारा निर्धारित किया जाता है। गाड़ी-स्टैंड, जैसा कि व्याख्या से स्पष्ट होता है, अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, मोटर वाहन अधिनियम, 1939 (संक्षेप में, "1939 अधिनियम") के अर्थ के अंतर्गत मोटर वाहनों सहित गाड़ियों के लिए स्टैंड को सम्मिलित करता है। 1939 अधिनियम के अंतर्गत मोटर वाहन की परिभाषा इस प्रकार है:

"मोटर वाहन" से तात्पर्य किसी भी यांत्रिक रूप से संचालित वाहन से है जो सड़कों पर उपयोग के लिए अनुकूलित हो, चाहे प्रेरण-शक्ति बाह्य स्रोत से अथवा आंतरिक स्रोत से संप्रेषित की जाती हो, और इसमें वह चेसिस भी सम्मिलित है जिस पर कोई बॉडी संलग्न न की गई हो तथा ट्रेलर; किंतु इसमें स्थिर पटरियों पर चलने वाला वाहन अथवा केवल स्वामी के परिसरों में प्रयुक्त वाहन सम्मिलित नहीं है।"

उपर्युक्त परिभाषा निर्विवाद रूप से बस को सम्मिलित करेगी। इसे दृष्टिगत रखते हुए, हमें कंडिका 285-ए का परीक्षण करना है, जिस पर पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा विशेष बल दिया गया है। उक्त उपबंध इस प्रकार है:-

"285-ए. सार्वजनिक स्थान या सार्वजनिक सड़क के किनारों का गाड़ी-स्टैंड आदि के रूप में उपयोग निषिद्ध— जहाँ आयुक्त ने कोई सार्वजनिक अवतरण स्थान, ठहराव स्थान, गाड़ी-स्टैंड, पशु-शाला अथवा गौ-शाला उपलब्ध कराई हो, वहाँ वह किसी भी व्यक्ति द्वारा उसी प्रयोजन के लिए किसी सार्वजनिक स्थान अथवा किसी सार्वजनिक सड़क के किनारों के उपयोग को, उस दूरी के भीतर, जैसा कि स्थायी समिति द्वारा निर्धारित किया जाए, निषिद्ध कर सकता है:

परंतु इस कंडिका में निहित कोई भी बात आयुक्त को राज्य सरकार द्वारा नगर में केवल राज्य सरकार के परिवहन विभाग से संबंधित मोटर वाहनों के लिए स्टैंड के रूप में प्रयुक्त किसी स्थान के उपयोग को निषिद्ध करने के लिए अधिकृत समझी नहीं जाएगी।”

23. धारा 285-बी गाड़ी-स्टैंड शुल्क आदि की वसूली से संबंधित है। उक्त उपबंध के सूक्ष्म परीक्षण से यह स्पष्ट है कि यदि धारा 285-बी की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिरोपित शुल्क का भुगतान नहीं किया जाता है, तो निगम का आयुक्त वसूली के प्रयोजनार्थ उपयुक्त कार्रवाई करने की शक्ति रखता है। धारा 285-सी निजी गाड़ी-स्टैंड के लिए अनुज्ञप्ति शुल्क से संबंधित है। यह उपबंध यह भी प्रतिपादित करता है कि कोई भी व्यक्ति आयुक्त से इसके लिए अनुज्ञप्ति प्राप्त किए बिना न तो नया गाड़ी-स्टैंड खोलेगा और न ही किसी निजी गाड़ी-स्टैंड को खुला रखेगा, तथा किसी स्थान का स्वामी अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन करने का दायित्व रखता है। धारा 285-सी (5) अनुज्ञप्ति शुल्क का प्रावधान करती है और धारा 285-सी (6) अनुज्ञप्ति की अवधि का प्रावधान करती है।

24. उपर्युक्त उपबंधों का संयुक्त पठन यह पूर्णतः स्पष्ट करता है कि अधिनियम के अंतर्गत निगम को गाड़ी-स्टैंड, जिसमें मोटर वाहनों सहित गाड़ियों के लिए स्टैंड सम्मिलित है, को नियंत्रित करने, शुल्क अधिरोपित करने तथा निजी गाड़ी-स्टैंड के लिए भी अनुज्ञप्ति का प्रावधान करने की शक्ति प्राप्त है।

25. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ताओं ने धारा 203 की उप-धारा (2) तथा धारा 285-ए के परंतुक पर अत्यधिक बल दिया है, जिन्हें हम पूर्व में उद्धृत कर चुके हैं। धारा 203 की उप-धारा (2), जैसा कि पूर्व में कहा गया है, राज्य सरकार को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह किसी अधिसूचना द्वारा किसी ऐसी सड़क, नाली, जलनिकासी कार्य, सुरंग, पुलिया अथवा वृक्ष को निगम के नियंत्रण से वापस ले सके। राज्य सरकार द्वारा जारी अधिसूचना का उल्लेख इस प्रतिपादन को पुष्ट करने के लिए किया गया है कि जिस समस्त

क्षेत्र में बस प्रतीक्षालयों का निर्माण किया गया है, उसे निगम के नियंत्रण से वापस ले लिया गया है। हम उक्त अधिसूचना की व्याख्या करते समय, बाद के चरण में इस पर विचार करेंगे। इतना कहना पर्याप्त है कि धारा 203 की उप-धारा (2) को धारा 203 की उप-धारा (1) के अपवाद के रूप में समझा जाना चाहिए और इसके लिए विशिष्ट अधिसूचना आवश्यक है, क्योंकि इसमें प्रयुक्त शब्द “ऐसे” अपने विशिष्ट अर्थ और विधिक महत्व रखते हैं।

26. वर्तमान में, हम धारा 285-ए के उपबंध की ओर उन्मुख होंगे। धारा 285-ए को धारा 285 के साथ संयुक्त रूप से पढ़ा जाना आवश्यक है। धारा 285 आयुक्त को सार्वजनिक अवतरण स्थलों, ठहराव स्थलों, गाड़ी-ठहराव स्थलों आदि के निर्माण या उपलब्ध कराने की शक्ति प्रदान करती है। स्पष्टीकरण में गाड़ियों के लिए ऐसे ठहराव स्थल को सम्मिलित किया गया है, जिसमें गाड़ी-ठहराव स्थल की परिभाषा के अंतर्गत मोटर वाहनों के लिए ठहराव स्थल भी सम्मिलित है। धारा 285-ए आयुक्त को यह प्राधिकृत करती है कि वह किसी व्यक्ति द्वारा किसी सार्वजनिक स्थान या सार्वजनिक सड़क के किनारों का गाड़ी-ठहराव स्थल आदि के रूप में उपयोग, उस दूरी के भीतर, जिसे स्थायी समिति द्वारा निर्धारित किया जाना है, निषिद्ध कर सके। उक्त उपबंध एक अपवाद का प्रावधान करता है, जो यह उपविधारित करता है कि धारा 285-ए में निहित कोई भी बात आयुक्त को इस आशय का प्राधिकरण प्रदान करती हुई नहीं मानी जाएगी कि वह नगर में राज्य सरकार द्वारा केवल राज्य सरकार के परिवहन विभाग से संबंधित मोटर वाहनों के लिए प्रयुक्त किसी स्थान के उपयोग को निषिद्ध कर सके।

27. अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता यह प्रतिपादित करेंगे कि एम.टी.सी.एल. एक राज्य उपक्रम है और परिवहन विभाग के अधीन आता है। उक्त उपबंध के पठन से यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि आयुक्त की शक्ति का विस्तार इस सीमा तक नहीं किया जा सकता कि वह नगर में राज्य सरकार द्वारा केवल परिवहन विभाग से संबंधित मोटर वाहनों के लिए प्रयुक्त किसी स्थान के उपयोग को निषिद्ध कर सके। अपीलकर्ताओं के

विद्वान अधिवक्ता यह भी आग्रह करते हैं कि संबंधित वाहन राज्य उपक्रमों के हैं और इस प्रकार परिवहन विभाग से संबंधित हैं, और इसलिए आयुक्त की इसमें कोई भूमिका नहीं है। प्रथम दृष्टया उपर्युक्त निवेदन कुछ हद तक आकर्षक प्रतीत होता है, किंतु सूक्ष्म परीक्षण पर यह महत्वहीन सिद्ध होता है। हम ऐसा इसलिए मानते हैं कि धारा 285 में “गाड़ी-ठहराव स्थल” शब्द का प्रयोग किया गया है और संशोधन द्वारा यह विनिर्दिष्ट किया गया है कि गाड़ी-ठहराव स्थल का अभिप्राय मोटर वाहन अधिनियम, 1939 के अर्थ में मोटर वाहनों सहित गाड़ियों के लिए “ठहराव स्थल” होगा। धारा 285-ए के उपबंध में भी “केवल मोटर वाहनों के लिए ठहराव स्थल” पदावली का प्रयोग किया गया है। किसी अधिनियम में प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या उनके व्याकरणिक अर्थ में की जानी चाहिए। युक्तिसंगतता या अन्यथा तभी प्रासंगिक होती है जब अधिनियम स्पष्ट न हो। बहुत पहले, *प्रिवी काउंसिल ने कॉरपोरेशन ऑफ द सिटी ऑफ विक्टोरिया बनाम बिशप ऑफ वैंकूवर आइलैंड*¹ में इस प्रकार प्रतिपादित किया था—

“विधानों की व्याख्या में उनके शब्दों का अर्थ उनके सामान्य व्याकरणिक अर्थ में किया जाना चाहिए, जब तक कि संदर्भ में, या उस विधान के उद्देश्य में, जिसमें वे प्रयुक्त हुए हैं, या उन परिस्थितियों में, जिनके संदर्भ में वे प्रयुक्त हुए हैं, ऐसा कुछ न हो जिससे यह प्रदर्शित हो कि वे अपने सामान्य व्याकरणिक अर्थ से भिन्न किसी विशेष अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं। *ये बनाम पीयरसन*² में, लॉर्ड वेन्सलेडेल ने कहा—

‘मैं लंबे समय से, और गहराई से, उस नियम की बुद्धिमत्ता से प्रभावित रहा हूँ, जो अब, मेरा विश्वास है, कम से कम

1 ए.आई.आर. 1921 पी.सी. 240

2 (1957) 6 एच.एल.सी. 61

वेस्टमिंस्टर हॉल के विधि न्यायालयों में सार्वत्रिक रूप से अपनाया गया है, कि वसीयतों की व्याख्या में, और वास्तव में विधानों तथा सभी लिखित उपकरणों की व्याख्या में, शब्दों के व्याकरणिक और सामान्य अर्थ का पालन किया जाना चाहिए, जब तक कि ऐसा करने से कोई असंगति, या कोई विरोधाभास, या उपकरण के शेष भाग के साथ कोई असंगति उत्पन्न न हो; ऐसे में शब्दों के व्याकरणिक और सामान्य अर्थ को उस असंगति और विरोधाभास से बचने के लिए संशोधित किया जा सकता है; किंतु उससे आगे नहीं।”

28. इस संदर्भ में, *के.पी. वर्गीज बनाम आयकर अधिकारी, एर्नाकुलम एवं अन्य*³ का उल्लेख करना भी उपयुक्त है, जिसमें न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया था—

“..... किसी विधायी अधिनियमन की व्याख्या का कार्य एक यांत्रिक कार्य नहीं है। यह मात्र गणितीय सूत्रों के पठन से कहीं अधिक है, क्योंकि बहुत कम शब्दों में गणितीय प्रतीकों जैसी परिशुद्धता होती है। यह विधायिका की उस मंशा का अन्वेषण करने का प्रयास है, जो उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा से प्रकट होती है, और यह सदैव स्मरण रखा जाना चाहिए कि भाषा, मानवीय विचार की अभिव्यक्ति के लिए, सर्वोत्तम रूप में भी एक अपूर्ण उपकरण है, और जैसा कि लॉर्ड डेनिंग ने इंगित किया है, यह अपेक्षा करना निरर्थक होगा कि प्रत्येक विधिक उपबंध ‘दैवी दूरदर्शिता और पूर्ण स्पष्टता’ के साथ प्रारूपित किया गया हो। हम इससे बेहतर कुछ नहीं कर सकते कि न्यायाधीश लर्नेड हैंड के प्रसिद्ध शब्दों को पुनः दोहराएँ, जब उन्होंने कहा—

‘... यह सत्य है कि प्रयुक्त शब्द, यहाँ तक कि उनके शाब्दिक अर्थ में भी, किसी भी लेखन—चाहे वह अधिनियम हो, अनुबंध हो या कुछ और—के अर्थ की व्याख्या का प्राथमिक और सामान्यतः सबसे विश्वसनीय स्रोत होते हैं। किंतु यह एक परिपक्व और विकसित न्यायशास्त्र का सबसे सुनिश्चित संकेतकों में से एक है कि शब्दकोश को किले के रूप में न बनाया जाए; बल्कि यह स्मरण रखा जाए कि विधानों का सदैव कोई न कोई उद्देश्य या लक्ष्य होता है, जिसकी सहानुभूतिपूर्ण और कल्पनाशील खोज उनके अर्थ की सबसे सुनिश्चित मार्गदर्शक होती है।’”

29. हमने उपर्युक्त प्राधिकरणों का संदर्भ केवल इस बात को उजागर करने के लिए किया है कि मोटर वाहनों के लिए स्टैंड का अपने व्याकरणिक अर्थ में अर्थ पूर्णतः स्पष्ट है और वह एक निश्चित अर्थ व्यक्त करता है। इसका मूल अभिप्राय मोटर वाहन के लिए स्टैंड की व्यवस्था करना है। धारा 285 में प्रयुक्त शब्द कार्ट-स्टैंड है। व्याख्या स्पष्ट रूप से यह कहती है कि इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए कार्ट-स्टैंड में मोटर वाहन सम्मिलित होंगे। अधिनियम द्वारा निगम को कार्ट-स्टैंडों की व्यवस्था करने के लिए अधिकृत किया गया है। जब कोई मोटर वाहनों के लिए स्टैंड के बारे में सोचता है, तो उसका अर्थ केवल पार्किंग स्थान ही होता है। यही उस शब्द का लोकप्रिय अर्थ है। यदि कोई यह कल्पना करना चाहे कि “स्टैंड” में यात्रियों के लिए आश्रय भी सम्मिलित हैं, तो यह एक अत्यंत अविवेकपूर्ण व्याख्या होगी। इसे सामान्य प्रचलन के अर्थ में ही दिया जाना चाहिए। लोकप्रिय अर्थ की संकल्पना से संबंधित मामले में, इस न्यायालय की दो-न्यायमूर्ति पीठ ने *मध्य प्रदेश, इंदौर के विक्रय कर आयुक्त बनाम मैसर्स जसवंत सिंह चरन सिंह* के प्रकरण में उक्त पक्ष पर विचार करते हुए इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :

“यह नियम सन् 1831 में ही लॉर्ड टेंटरडेन द्वारा अटॉर्नी-जनरल बनाम विंस्टैनली [1831] 2 डी एंड सी 302 में प्रतिपादित किया गया था। इसी प्रकार, ग्रेनफेल बनाम इनलैंड रेवेन्यू कमिश्नर [1876] एल.आर. एक्स-डी. 242 में पोलक, बी. ने यह अवलोकन किया कि ‘यदि किसी विधि में प्रयुक्त भाषा को लोकप्रिय अर्थ में व्याख्यायित किया जा सकता है, तो ऐसी विधि की व्याख्या उसमें प्रयुक्त भाषा के कठोर या तकनीकी अर्थ के अनुसार नहीं की जानी चाहिए, बल्कि उसके लोकप्रिय अर्थ में की जानी चाहिए; और “लोकप्रिय अर्थ” से अभिप्राय वह अर्थ है जो उस विषय से परिचित व्यक्ति उस पर आरोपित करेंगे जिससे वह विधि संबंधित है।’ किंतु, ‘यदि कोई शब्द अपने लोकप्रिय अर्थ में और सामान्य रूप से पढ़े जाने पर दो व्याख्याओं के योग्य हो, तो ऐसी व्याख्या को अपनाना विवेकपूर्ण है जो इस मान्यता पर आधारित हो कि संसद का उद्देश्य केवल उतनी ही शक्ति प्रदान करना था जितनी अधिनियम के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक हो, न कि कोई अनावश्यक शक्ति प्रदान करना। दूसरे शब्दों में, शब्दों की व्याख्या अधिनियम के विषय की उपयुक्तता के अनुरूप की जानी चाहिए।”

30. सम्पूर्ण अधिनियम की योजना, जैसा कि हम देखते हैं, निगम को सार्वजनिक सड़कों पर नियंत्रण रखने तथा सार्वजनिक सुविधा के लिए व्यवस्थाएँ करने की शक्ति प्रदान करने की है। निगम के लिए स्टैंडों की व्यवस्था करना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, निगम या उसका अधिकृत अधिकारी, अर्थात् आयुक्त, परिवहन निगम के मोटर वाहनों के लिए अभिप्रेत स्टैंड को प्रतिबंधित नहीं कर सकता। अधिनियम के विभिन्न उपबंधों में प्रयुक्त भाषा से विधायी आशय पूर्णतः स्पष्ट है। व्याख्या का उद्देश्य विधानमंडल की मेंस या सेंटेंशिया लेजिस को समझना और संकलित करना है, जैसा कि *ग्रासिम इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम*

कलेक्टर ऑफ कस्टम्स, बॉम्बे में अभिनिर्धारित किया गया है। उक्त प्राधिकरण में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है :

“किसी भी विधि की व्याख्या करते समय किसी भी शब्द की व्याख्या का प्राथमिक सिद्धांत यह है कि विधानमंडल की मेंस या सेंटेंशिया लेजिस को संकलित किया जाए। जहाँ शब्द स्पष्ट हों और कोई अस्पष्टता न हो, तथा कोई द्वायर्थता न हो और विधानमंडल का आशय स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त हो, वहाँ न्यायालय के लिए यह कार्य अपने ऊपर लेना कि वह विधिक उपबंधों में संशोधन या परिवर्तन करे, कोई अवकाश नहीं है। जहाँ भाषा स्पष्ट हो, वहाँ विधानमंडल का आशय प्रयुक्त भाषा से ही संकलित किया जाना चाहिए। ऐसा करते समय, विधि में जो कहा गया है तथा जो नहीं कहा गया है—दोनों पर ध्यान दिया जाना चाहिए। ऐसी व्याख्या जिससे समर्थन हेतु शब्दों का जोड़ या प्रतिस्थापन आवश्यक हो, अथवा जिससे शब्दों का परित्याग परिणामस्वरूप हो, उससे परहेज किया जाना चाहिए। जैसा कि *प्रिवी काउंसिल ने क्रॉफर्ड बनाम स्पूनर*⁵ में कहा है—‘हम विधानमंडल द्वारा किसी अधिनियम की दोषपूर्ण अभिव्यक्ति की सहायता नहीं कर सकते; हम जोड़ या सुधार नहीं कर सकते और व्याख्या द्वारा उन कमियों की पूर्ति नहीं कर सकते जिन्हें वहाँ छोड़ा गया है।’ किसी साधारण शब्द के मामले में सामान्य प्रयोजन हेतु प्रतिस्थापन या परिभाषा-परिवर्तन का प्रयास नहीं किया जाना चाहिए। ध्यान केवल उस पर सीमित रहना चाहिए जो विशेष मामले का निर्णय करने के लिए आवश्यक हो। यह सिद्धांत अत्यंत स्थापित है और इस न्यायालय के कुछ निर्णयों का संदर्भ

5 (2002) 4 एस.सी.सी. 297

6 (1846) 6 मूर पी.सी. 1

पर्याप्त होगा। (देखें : *ग्वालियर रेयॉन्स सिल्क मैन्युफैक्चरिंग (वीविंग) कंपनी लिमिटेड बनाम कस्टोडियन ऑफ वेस्टेड फॉरेस्ट्स*⁷; *भारत संघ बनाम देओकी नंदन अग्रवाल*⁸; *इंस्टीट्यूट ऑफ चार्टर्ड अकाउंटेंट्स ऑफ इंडिया बनाम प्राइस वाटरहाउस*⁹ तथा *हरभजन सिंह बनाम प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया*¹⁰।)”

31. यदि उपर्युक्त संदर्भित उपबंधों को विधिक व्याख्या से संबंधित उपर्युक्त सिद्धांतों की कसौटी पर समझा जाए, तो इसमें रती भर भी संदेह नहीं रह जाता कि विधानमंडल ने निगम को सार्वजनिक सुविधा हेतु आवश्यक कार्रवाई करने तथा कार्ट-स्टैंड की व्यवस्था करने की शक्ति प्रदान की है, जिसमें मोटर वाहन सम्मिलित हैं। अधिनियम की धारा 285-ए के प्रावधान द्वारा किया गया अपवाद दूर-दूर तक भी यह संकेत नहीं देता कि विधानमंडल ने एम.टी.सी.एल. जैसे किसी अन्य निकाय, जो कि राज्य उपक्रम है, को बस यात्रियों के आश्रय निर्मित करने के विषय में भी कभी परिकल्पित किया हो। धारा 285-ए के प्रावधान में जो अंतर्निहित किया गया है, वह केवल यह है कि निगम या उसका अभिकर्ता राज्य सरकार के परिवहन विभाग से संबंधित मोटर वाहनों के लिए किसी स्थान के स्टैंड के रूप में उपयोग को प्रतिबंधित नहीं कर सकता। हम इस विचारित मत के हैं कि धारा 285-ए को धारा 285 के साथ समीपस्थ रखकर पढ़ा जाना चाहिए और किसी भी प्रकार की कल्पना से इसे बस यात्रियों के आश्रय को सम्मिलित करने के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता। “स्टैंड” शब्द को उसके सामान्य अर्थ में ही समझा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, पाठ, प्रसंग तथा शब्दों के प्रयोग की पद्धति यह संकेत देती है कि इसका उद्देश्य मोटर वाहनों के लिए स्टैंड की व्यवस्था

7 (1990) सप्ल. एस.सी.सी. 785

8 (1992) एस.सी.सी. (एल एंड एस) 248

9 (1979) 6 एस.सी.सी. 312

10 (2002) 3 एस.सी.सी. 722

करना ही है। इस संदर्भ में, हम *उत्कल कॉन्ट्रैक्टर्स एंड जॉइनरी प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य बनाम उड़ीसा राज्य एवं अन्य* से एक अंश का लाभप्रद रूप से उल्लेख कर सकते हैं, जो इस प्रकार है :

“किसी भी विधि के किसी भी उपबंध और किसी भी शब्द की पृथक-पृथक व्याख्या नहीं की जा सकती। किसी भी उपबंध या शब्द की व्याख्या करने से पूर्व संपूर्ण विधि को समग्र रूप से देखा जाना चाहिए। परिस्थिति और रचना-पद्धति महत्वपूर्ण हैं। यह भी स्मरण रखना आवश्यक है कि संसद अनावश्यक रूप से अपने शब्द व्यर्थ नहीं करती। जिस प्रकार संसद से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वह अनावश्यक अभिव्यक्तियों का प्रयोग करे, उसी प्रकार यह भी अपेक्षित नहीं है कि वह स्वयं को अनावश्यक रूप से व्यक्त करे। जैसे संसद बिना अर्थ के किसी शब्द का प्रयोग नहीं करती, वैसे ही जहाँ विधायन की आवश्यकता नहीं है, वहाँ वह विधायन भी नहीं करती। यह नहीं माना जा सकता कि संसद केवल विधायन के लिए विधायन करती है; न ही यह माना जा सकता है कि वह निरर्थक विधायन करती है। संसद को अनावश्यक विधायन करने वाला नहीं माना जा सकता। पुनः, यद्यपि अधिनियम के शब्द महत्वपूर्ण हैं, तथापि प्रसंग भी उतना ही महत्वपूर्ण है।”

32. उपर्युक्त सिद्धांत को लागू करते हुए, जब हम उपबंधों की संरचना का परीक्षण करते हैं, तो हम एकमात्र निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए बाध्य होते हैं कि निगम को कार्ट-स्टैंड से निपटने का अधिकार प्राप्त है, जिसमें मोटर वाहन सम्मिलित हैं, और अधिनियम की धारा 285 के प्रावधान में प्रयुक्त ‘स्टैंड’ शब्द केवल मोटर वाहनों के लिए स्टैंड को ही संदर्भित करता है और उसमें बस यात्रियों के आश्रय सम्मिलित नहीं हो सकते।

33. इस चरण पर, हमें अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा, यद्यपि कमजोर रूप से प्रस्तुत, उस निवेदन का भी संज्ञान लेना आवश्यक है कि 'स्टैंड' शब्द, भले ही उसे कार्ट-स्टैंड के समतुल्य स्टैंड के रूप में व्याख्यायित किया जाए, तो भी उसका अर्थ केवल मोटर वाहनों के लिए स्टैंड होगा और उसमें बस यात्रियों के आश्रय सम्मिलित नहीं होंगे, और इसलिए निगम को अधिकार प्राप्त नहीं होगा बल्कि राज्य सरकार को शक्ति प्राप्त होगी। उक्त निवेदन का कोई आधार नहीं है और अतः इसे यहाँ अस्वीकार किया जाता है। इसका कारण यह है कि अधिनियम की धारा 204 के अंतर्गत निगम पर जनसुविधा की देखभाल करने का दायित्व निहित है। उपबंधों के समष्टिगत पाठ तथा अधिनियम की योजना की सम्यक् समझ से किसी भी प्रकार का संदेह शेष नहीं रहता कि निगम को 'स्टैंडों' से निपटने का अधिकार प्राप्त है और जनसुविधा के लिए बस यात्रियों के आश्रयों को नियंत्रित एवं प्रबंधित करने का दायित्व भी उसी का है। उचित प्रबंधन के विषय में विचार करना निगम के अधिकार क्षेत्र के भीतर ही आता है।

34. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता के तर्क का मुख्य बल यह है कि राज्य सरकार ने बस यात्रियों के लिए आश्रयों के निर्माण का प्रभार तथा उत्तरदायित्व एम.टी.सी.एल. को सौंप दिया है और राज्य सरकार के निर्णय द्वारा सशक्त होकर एम.टी.सी.एल. ने अपीलकर्ताओं के साथ समझौता किया है और, इसलिए, ऐसे कृत्य में कोई दोष नहीं पाया जा सकता। उक्त उद्देश्य के लिए जीओएमएस सं. 14, नगर प्रशासन एवं जल आपूर्ति विभाग, दिनांक 11.01.1993 पर आश्रय किया गया है, जिसके द्वारा राज्य परिवहन उपक्रम को बस यात्रियों के लिए आश्रय उपलब्ध कराने तथा उनका अनुरक्षण करने की अनुमति दी गई थी। उक्त आदेश, जैसा कि उच्च न्यायालय के आदेश में प्रस्तुत किया गया है, इस प्रकार है:-

“आदेश

तमिलनाडु सरकार द्वारा ऊपर उल्लिखित जी.ओ. में गठित परिवहन क्षेत्र विशेषज्ञ समिति ने अपनी प्रतिवेदन प्रस्तुत की।

2. समिति द्वारा की गई अनुशंसा संख्या 109 इस प्रकार थी:-

109. सड़क का अनुरक्षण करने वाले स्थानीय प्राधिकारी बस बे स्थान उपलब्ध कराएँ, यात्रियों के लिए आश्रय राज्य परिवहन उपक्रमों द्वारा अवसंरचनात्मक सुविधाओं के रूप में उपलब्ध कराए जाएँ और उनका अनुरक्षण भी राज्य परिवहन उपक्रमों द्वारा किया जाए।

3. सम्यक् विचार के उपरांत, सरकार उक्त अनुशंसा को स्वीकार करती है और निर्देश देती है कि जहाँ कहीं संभव हो, नगर निगम तथा नगरपालिकाएँ नगर सड़कों पर बस बे स्थान उपलब्ध कराएँ। राज्य परिवहन उपक्रम को यात्रियों के लिए आश्रय उपलब्ध कराने तथा उनका अनुरक्षण करने की अनुमति दी जाएगी।”

35. उपर्युक्त सरकारी आदेश में समिति की अनुशंसा संख्या 109 का उल्लेख किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि एक विशेषज्ञ समिति का गठन किया गया था और उसने यह अनुशंसा की थी कि स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा अनुरक्षित सड़कें बस बे स्थान उपलब्ध कराएँ, यात्रियों के लिए आश्रय राज्य परिवहन उपक्रमों द्वारा अवसंरचनात्मक सुविधाओं के रूप में उपलब्ध कराए जाएँ तथा उनका अनुरक्षण भी राज्य परिवहन उपक्रमों द्वारा किया जाए।

36. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क है कि सरकार ने उक्त परिवहन उपक्रम को प्राधिकृत किया है और यह कार्य अधिनियम की धारा 285-ए के उपबंध के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग करते हुए किया गया है। हम पहले ही अधिनियम की धारा 285-ए तथा उससे संलग्न उपबंध के परिसर और क्षेत्र की व्याख्या कर चुके हैं। यह उपबंध केवल उन स्टैंडों के संबंध में अपवाद प्रदान करता है, जिनका उपयोग राज्य द्वारा स्वामित्व वाले परिवहन उपक्रमों के मोटर वाहनों के लिए किया जाना है, जब राज्य ऐसा निर्णय ले, और ऐसे स्टैंडों के उपयोग को निगम के आयुक्त द्वारा प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता। जैसा कि पूर्व में विवेचित किया गया है, “स्टैंड” का आशय केवल “मोटर वाहनों के लिए स्टैंड” से है।

“स्टैंड” में यात्रियों के लिए आश्रय सम्मिलित नहीं हो सकता। “स्टैंड”, जैसा कि पहले कहा गया है, मोटर वाहन के लिए या तो “पार्किंग स्थान” अथवा “ठहराव स्थान” का अर्थ प्रकट करता है। सामान्य प्रचलन में “स्टैंड” और “यात्रियों के लिए आश्रय” भिन्न-भिन्न हैं और उन्हें समान अर्थ प्रदान नहीं किया जा सकता। राज्य सरकार यह कर सकती थी कि वह परिवहन विभाग के मोटर वाहनों के लिए कुछ स्थानों को स्टैंड के रूप में अधिसूचित करे, जिनमें राज्य परिवहन उपक्रम, अर्थात् एम.टी.सी.एल., सम्मिलित हो सकते हैं; किंतु अधिनियम की योजना को जिस प्रकार हम समझते हैं, उसके अंतर्गत राज्य सरकार को यात्रियों के लिए आश्रय उपलब्ध कराने की अनुमति देने हेतु कोई वैधानिक प्राधिकार प्राप्त नहीं है। यह विधि में भली-भाँति स्थापित है कि नियम, विनियम अथवा अधिसूचना में से कोई भी अधिनियम में निहित प्रावधानों का अतिक्रमण नहीं कर सकता। **जनरल ऑफिसर कमांडिंग-इन-चीफ बनाम डॉ. सुभाष चंद्र यादव**¹² में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि—

“..... किसी नियम को वैधानिक प्रावधान का प्रभाव प्राप्त होने से पूर्व दो शर्तों का पूरा होना आवश्यक है, अर्थात् (1) वह उस अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप हो जिसके अंतर्गत वह बनाया गया है; तथा (2) वह उस नियम-निर्माण शक्ति के क्षेत्र और परिधि के भीतर भी हो, जिसके अंतर्गत उसे बनाने का अधिकार संबंधित प्राधिकारी को प्राप्त है। यदि इन दोनों में से कोई भी शर्त पूरी नहीं होती, तो ऐसा नियम शून्य होगा।”

37. **बी.के. गराड बनाम नासिक मर्चेंट्स को-ऑपरेटिव बैंक लिमिटेड**¹³ में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि किसी विधि और अधीनस्थ विधान के बीच कोई संघर्ष

12 (1988) 2 एस.सी.सी. 351

13 (1984) 2 एस.सी.सी. 50

हो, तो विधि को अधीनस्थ विधान पर प्रधानता प्राप्त होगी और यदि अधीनस्थ विधान विधि के अनुरूप नहीं है, तो उसे उपेक्षित किया जाना होगा।

38. *अतिरिक्त जिला दंडाधिकारी (राजस्व), दिल्ली प्रशासन बनाम श्री राम*¹⁴ में यह मत प्रकट किया गया है कि यह एक सुपरिचित सिद्धांत है कि किसी अधिनियम द्वारा नियम-निर्माण शक्ति का प्रदान नियम-निर्माण प्राधिकारी को ऐसा नियम बनाने का अधिकार नहीं देता, जो सक्षम अधिनियम के क्षेत्र से परे जाए या जो उससे असंगत अथवा उससे विरोधी हो।

39. उपर्युक्त न्यायिक प्राधिकारों की कसौटी पर परखे जाने पर, यह निश्चितता के साथ कहा जा सकता है कि वर्तमान प्रकृति का कोई आदेश राज्य सरकार द्वारा जारी नहीं किया जा सकता था, क्योंकि वह अधिनियम के अनुरूप नहीं है और वस्तुतः वैधानिक प्रावधानों से परे चला जाता है।

40. हमारे पूर्ववर्ती विश्लेषण के आलोक में, उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया यह मत कि निगम को अधिनियम के अधीन प्रतिबंधों के अधीन रहते हुए सड़कों से संबंधित कार्य करने की शक्ति अथवा अधिकार प्राप्त है और एम.टी.सी.एल. को, जैसा कि ऊपर उल्लिखित सरकारी आदेश के आधार पर दावा किया गया है, ऐसा कोई अधिकार अथवा शक्ति प्राप्त नहीं है, विधि में पूर्णतः औचित्यपूर्ण है।

41. वर्तमान में, हमें समता के पहलू पर विचार करना है। इस प्रश्न में प्रवेश करने से पूर्व कि अपीलकर्ता किसी समता के अधिकारी हैं या नहीं, यह उपयुक्त होगा कि उन न्यायिक प्राधिकारों का संदर्भ लिया जाए जहाँ समता का प्रयोग नहीं किया जा सकता। *केदार लाल सील एवं अन्य बनाम हरि लाल सील*¹⁵ में, समता के आधार पर किसी समाधान की

14 (2000) 5 एस.सी.सी. 451

15 ए.आई.आर. 1952 एस.सी. 47

अवधारणा पर विचार करते हुए, न्यायमूर्ति बोस, पीठ की ओर से बोलते हुए, इस प्रकार अभिनिर्धारित किया:

“मेरे मत में, इस निर्णय में पूर्व में प्रतिपादित द्वितीय समाधान, जो समता पर आधारित है, को तत्काल अस्वीकृत किया जाना चाहिए। इन विषयों का नियमन विधि द्वारा किया जा चुका है और अब हम केवल वैधानिक अधिकारों से संबंधित हैं और वैधानिक प्रावधानों के होते हुए, चाहे वे प्रथम दृष्टया कितने ही न्यायसंगत क्यों न प्रतीत हों, समता के सिद्धांतों का आश्रय नहीं ले सकते।”

42. *राजा राम महादेव परांजपे एवं अन्य बनाम अबा मारुति माली एवं अन्य*¹⁶ में, तीन-न्यायमूर्ति पीठ ने यह मत व्यक्त किया—

“समता किसी विधि को निरस्त नहीं करती। यह हमें सुदृढ़ रूप से स्थापित प्रतीत होता है; तथापि, हम व्हाइट एवं ट्यूडर की इक्विटी में प्रमुख वाद (नवम संस्करण, पृष्ठ 238) का संदर्भ दे सकते हैं, जहाँ यह कहा गया है: यद्यपि पक्षकारों के मध्य अनुबंध के मामलों में समता प्रायः दंड और जब्ती के विरुद्ध राहत प्रदान करती है, जहाँ प्रतिपूर्ति दी जा सकती है, तथापि विधि के प्रावधानों के विरुद्ध कभी भी राहत प्रदान नहीं की जा सकती।”

43. *पी.एम. लता एवं अन्य बनाम केरल राज्य एवं अन्य*¹⁷ में यह मत व्यक्त किया गया है—

“समता और विधि जुड़वां भाई हैं और विधि का प्रयोग तथा व्याख्या समतापूर्ण ढंग से की जानी चाहिए, किंतु समता लिखित या स्थापित विधि पर प्रभावी नहीं हो सकती.....”

16 ए.आई.आर. 1962 एस.सी. 753

17 (2003) 3 एस.सी.सी. 541

44. *रघुनाथ राज बरेजा एवं अन्य बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य*¹⁸ में, इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि यह सुप्रतिष्ठित है कि जब विधि और समता के बीच संघर्ष होता है, तो विधि को ही प्रबल होना होता है। न्यायालय ने आगे यह अभिनिर्धारित किया कि समता, विधि को पूरक कर सकती है, किंतु उसे प्रतिस्थापित या अधिरोहित नहीं कर सकती। इस संदर्भ में *मदामांची रामप्पा बनाम मुथालुरु बोज्जप्पा*¹⁹, *लक्ष्मीनारायण आर. भट्टट्ट बनाम महाराष्ट्र राज्य*²⁰, *नासिरुद्दीन बनाम सीता राम अग्रवाल*²¹, *ई. पलानीसामी बनाम पलानीसामी*²², *इंडिया हाउस बनाम किशन एन. लालवानी*²³ पर भी भरोसा किया गया।

45. वर्तमान मामले में, चूँकि हमने यह निष्कर्ष निकाला है कि बस प्रतीक्षालयों से संबंधित कार्य करने का अधिकार निगम को है और एम.टी.सी.एल. को नहीं, इसलिए समता को विधि के समक्ष समर्पण करना होगा। अपीलकर्ताओं की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रस्तुत किया गया कि उन्होंने संरचनाओं के निर्माण तथा उससे संबंधित कुछ अनुषंगी कार्यों में भारी राशि व्यय की है और इसलिए उचित विस्तार प्रदान किया जाना चाहिए। ऐसी प्रार्थना, यह कहने की आवश्यकता नहीं है, समता के क्षेत्र में आती है। इसे स्वीकृत नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसा करना विधि का उल्लंघन होगा। एम.टी.सी.एल. और अपीलकर्ताओं के बीच किया गया अनुबंध, निगम को बाध्य नहीं कर सकता। यदि अनुबंध में कोई अनियमितता या कोई चूक होती, तब समता के सिद्धांत को आहूत करने का प्रश्न उत्पन्न हो सकता था, किंतु जैसा कि स्पष्ट है, यह दो पक्षों के बीच किया गया ऐसा

18 (2007) 2 एस.सी.सी. 230

19 ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 1633

20 (2003) 5 एस.सी.सी. 413

21 (2003) 2 एस.सी.सी. 577

22 (2003) 1 एस.सी.सी. 123

23 (2003) 9 एस.सी.सी. 393

समझौता है, जो ऐसे कार्य के संबंध में है, जिसमें से एक पक्ष को प्रवेश करने का कानूनी अधिकार ही प्राप्त नहीं है।

46. इसके अतिरिक्त, समता के प्रश्न से निपटते समय, हम पक्षकारों के आचरण पर विचार करने के लिए बाध्य हैं। उच्च न्यायालय ने रिट याचिका का निर्णय निगम के पक्ष में किया था। एम.टी.सी.एल. इस तथ्य से पूर्णतः सचेत था कि उसे बस प्रतीक्षालयों के संबंध में किसी भी प्रकार का अनुबंध करने का कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि यह विषय निगम के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत आता था। इस न्यायालय द्वारा किसी भी समय उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के प्रवर्तन पर स्थगन नहीं दिया गया। 19.1.2007 को पारित एकमात्र आदेश यह था कि आगे के आदेशों तक, लाइसेंस शुल्क के पूर्ण भुगतान के अधीन, याचिकाकर्ताओं को आवंटित बस प्रतीक्षालयों के संबंध में कोई कार्रवाई नहीं की जाएगी। यह उल्लेखनीय है कि 19.01.2007 के आदेश के स्पष्टीकरण हेतु एक आवेदन दायर किया गया था। 10.3.2008 को, इस न्यायालय ने यह आदेश पारित किया कि स्पष्टीकरण तथा निर्देशों हेतु दिए गए आवेदन, विशेष अनुमति याचिका के साथ विचारित किए जाएंगे। उक्त आदेश के पश्चात, स्मरणपत्र दायर किया गया, जिसे पूर्व में उद्धृत किया जा चुका है। जो बात चिन्ताजनक है, वह यह है कि एम.टी.सी.एल. ने अपीलकर्ताओं के साथ समझौता/समन्वय किया और उसी समझौते के आधार पर एक अनुबंध संपादित किया। उस अनुबंध में, जैसा कि हम अवलोकन करते हैं, इस न्यायालय के आदेश का संदर्भ दिया गया है और यह वर्णित किया गया है कि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुपालन में यह अनुबंध किया गया। इस न्यायालय ने इस प्रकार का कोई आदेश/निर्देश कभी पारित नहीं किया। इस न्यायालय ने केवल समझौते के आधार पर मामले का निस्तारण किया था। इस न्यायालय द्वारा कोई निर्णय नहीं दिया गया था। ऐसी स्थिति में, जब पक्षकारों ने यह भली-भाँति जानते हुए कि उच्च न्यायालय का निर्णय अभी भी उनके समक्ष विद्यमान है, अनुबंध में प्रवेश किया, तो ऐसा स्वीकार्य नहीं किया जा सकता।

47. समता का दावा सत्य की मूल आधारशिला पर ही परखा जाना चाहिए। **दलीप सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य**²⁴ में, इस न्यायालय ने इस प्रकार अवलोकन किया है:

“..... सत्य स्वतंत्रता-पूर्व काल में प्रचलित न्याय-प्रदान प्रणाली का एक अभिन्न अंग था और लोग परिणामों की परवाह किए बिना न्यायालयों में सत्य कहने पर गर्व महसूस करते थे। तथापि, स्वतंत्रता-उपरांत काल में हमारे मूल्य-तंत्र में तीव्र परिवर्तन देखने को मिले हैं। भौतिकवाद ने पुराने आचार-संस्कारों को आच्छादित कर लिया है और व्यक्तिगत लाभ की लालसा इतनी तीव्र हो गई है कि विवादों में संलग्न लोग न्यायालयीय कार्यवाहियों में असत्य, कुप्रस्तुति तथा तथ्यों के दमन का सहारा लेने से संकोच नहीं करते।

पिछले 40 वर्षों में वादकारियों का एक नया वर्ग उभर आया है। इस वर्ग से

संबंधित लोगों को सत्य के प्रति कोई आदर नहीं है। वे अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निःसंकोच असत्य तथा अनैतिक साधनों का सहारा लेते हैं। इस नए वर्ग द्वारा उत्पन्न चुनौती से निपटने के लिए, न्यायालयों ने समय-समय पर नए नियम विकसित किए हैं और अब यह सुदृढ़ रूप से स्थापित है कि जो वादकारी न्याय की धारा को दूषित करने का प्रयास करता है अथवा दूषित हाथों से न्याय के पवित्र स्रोत को स्पर्श करता है, वह अंतरिम या अंतिम, किसी भी प्रकार की राहत का हकदार नहीं है।”

48. *अमर सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य*²⁵ में, दो-न्यायाधीशों की पीठ ने यह निर्धारित किया है:

“न्यायालयों ने सदियों से उन वादकारियों के प्रति असहमति व्यक्त की है, जो न्यायालयों को छलने और भ्रमित करने के उद्देश्य से, तथ्यों के पूर्ण प्रकटीकरण के बिना कार्यवाहियाँ प्रारंभ करते हैं। न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि ऐसे वादकारी ‘अशुद्ध हाथों’ के साथ आए हैं और वे अपने मामले के गुण-दोष पर सुनवाई के अधिकारी नहीं हैं।”

उक्त प्रकरण में यह भी उल्लेखित किया गया है कि यह न्यायशास्त्र के मूलभूत सिद्धांतों में से एक है कि वादकारियों को अपनी दलीलों में पूर्ण स्पष्टता तथा ईमानदार पारदर्शिता का पालन करना चाहिए।

49. वर्तमान प्रकरण में, अपीलकर्ताओं ने एम.टी.सी.एल. के साथ समझौता/निपटान किया। वे इस तथ्य से पूर्णतः अवगत थे कि उच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार एम.टी.सी.एल. के पास कोई प्राधिकार नहीं था। उच्च न्यायालय के निर्णय के आधार पर ऐसा समझौता किया ही नहीं जा सकता था। इसके बावजूद, समझौता किया गया और प्रकरणों का निस्तारण कर दिया गया।

50. यह दिवस के प्रकाश के समान स्पष्ट है कि एम.टी.सी.एल., जो राज्य परिवहन विभाग की एक शाखा है, ने अपने अधिकार-क्षेत्र का अतिक्रमण किया है, और हम यह मानने के लिए प्रवृत्त हैं कि यह जानबूझकर किया गया। इस संदर्भ में, *वेस्टमिन्स्टर कॉर्पोरेशन बनाम लंदन एंड नॉर्थ वेस्टर्न रेलवे*²⁶ से लिया गया वह अंश, जैसा कि *बिहार राज्य बनाम कामेश्वर सिंह*²⁷ में उद्धृत किया गया है, उद्धृत करना उचित है:

25 (2011) 7 एस.सी.सी. 69

26 (1905) ए.सी. 426

27 ए.आई.आर. 1952 एस.सी. 252

“यह सुदृढ़ रूप से स्थापित है कि कोई सार्वजनिक निकाय, जिसे वैधानिक शक्तियाँ प्रदान की गई हों, जैसी कि निगम को प्रदान की गई हैं, उसे यह सावधानी बरतनी चाहिए कि वह अपनी शक्तियों से अधिक न जाए अथवा उनका दुरुपयोग न करे। उसे उसे सौंपे गए प्राधिकार की सीमाओं के भीतर ही कार्य करना चाहिए। उसे सद्भावना में कार्य करना चाहिए। और उसे युक्तिसंगत रूप से कार्य करना चाहिए। अंतिम प्रस्ताव दूसरे में, यदि पहले में नहीं तो, निहित है।”

51. हमने उपर्युक्त न्यायिक दृष्टांतों का उल्लेख इस प्रस्ताव के समर्थन में किया है कि एम.टी.सी.एल., जो राज्य परिवहन विभाग का एक उपक्रम है और जिसे अधिनियम के अंतर्गत कुछ लाभ प्रदान किए गए हैं, यह भली-भाँति जानते हुए कि उसके पास किसी समझौते में प्रविष्ट होने का कोई प्राधिकार नहीं है, मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णय के पश्चात् बस आश्रयों के संबंध में एक अनुबंध में प्रविष्ट हुआ; उसने यह सचेत रूप से किया और वस्तुतः अनुबंध किया भी। प्रत्येक दृष्टिकोण से उसके लिए यह उचित होता कि वह अपनी सीमाओं के भीतर ही रहता। वह ऐसा करने में विफल रहा। जब एम.टी.सी.एल. को ऐसा करने की कोई शक्ति प्रदान नहीं की गई थी और वह किसी प्रदत्त शक्ति के आवरण में उस शक्ति का प्रयोग करता है, तो उसने वास्तव में विचलन का मार्ग प्रशस्त किया। अपीलकर्ता वैध रूप से एम.टी.सी.एल. के साथ किसी समझौते में प्रविष्ट नहीं हो सकते थे। वे राज्य उपक्रम के साथ किसी अनुबंध में प्रविष्ट नहीं हो सकते थे। यह निगम के वैधानिक अधिकारों को विफल करने के लिए एम.टी.सी.एल. के साथ मिलीभगत में किया गया स्पष्ट छल था। यह लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया एक कपट था। यह एक भिन्न विषय है कि निगम अपने हितों की रक्षा के लिए तत्क्षण सचेत नहीं हुआ। रिट याचिकाकर्ता ने अपने व्यक्तिगत हित में आदेश की पुनःस्मृति के लिए प्रार्थना की और उसके पश्चात्, जैसा कि हम पाते हैं, निगम अपनी निद्रा से जागा। जो भी हो, यह निगम के लिए एक हानि थी

और निगम एक सार्वजनिक निकाय है तथा उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने वित्तीय संसाधनों की सुरक्षा और प्रबंधन उन व्यक्तियों के हित के लिए करे जो अधिनियम के अंतर्गत आवृत्त हैं। अपीलकर्ताओं का आचरण, किसी भी दृष्टि से, पूर्णतः निंदनीय है।

52. एक अन्य पहलू पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। अपीलकर्ताओं द्वारा एम.टी.सी.एल. के साथ किया गया समझौता 12 वर्ष की अवधि के लिए किया गया है, जबकि उच्च न्यायालय द्वारा यह निर्देश दिया गया था कि चेन्नई नगर निगम का आयुक्त इच्छुक प्रायोजकों से निविदाएँ आमंत्रित करेगा। यह सत्य है कि उच्च न्यायालय ने अंतरिम व्यवस्था से संबंधित कुछ आदेश पारित किए थे, किंतु वे केवल यात्रियों के हितों की रक्षा के उद्देश्य से थे। निगम जैसे सार्वजनिक प्राधिकरण से यह अपेक्षित नहीं है कि वह निविदा आमंत्रित किए बिना, इस प्रकार की निजी वार्ताओं में प्रविष्ट हो, विशेषकर तब जब बस आश्रयों की व्यवस्था हेतु अनुबंध किया जा रहा हो। विधि में यह भली-भाँति स्थापित है कि जहाँ भी अनुबंध प्रदान किया जाना हो अथवा लाइसेंस दिया जाना हो, वहाँ सार्वजनिक प्राधिकरण के लिए पारदर्शी एवं निष्पक्ष प्रक्रिया अपनाना अनिवार्य है। इससे दो उद्देश्य सिद्ध होते हैं, अर्थात् सभी पात्र प्रतिस्पर्धियों की सहभागिता तथा उन्हें निष्पक्ष अवसर प्रदान करना, और साथ ही अधिकतम राजस्व का सृजन करना। इस संदर्भ में, *नगर निगम, मेरठ बनाम अल फहीम मीट एक्सपोर्ट्स (प्रा.) लिमिटेड एवं अन्य*²⁸ में दो-न्यायमूर्ति पीठ के निर्णय का उल्लेख करना समीचीन है, जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:

“यह विधि भली-भाँति स्थापित है कि राज्य, उसकी निगमों, उपकरणों तथा एजेंसियों द्वारा किए जाने वाले अनुबंध, सामान्यतः सार्वजनिक नीलामी/सार्वजनिक निविदा के माध्यम से ही प्रदान किए जाने चाहिए, अर्थात् पात्र व्यक्तियों से निविदाएँ आमंत्रित करके, और सार्वजनिक नीलामी अथवा निविदा आमंत्रण की सूचना को स्थानीय क्षेत्र में व्यापक प्रसार वाले

सुप्रसिद्ध दैनिक समाचार-पत्रों में प्रकाशित किया जाना चाहिए, जिसमें सभी प्रासंगिक विवरण, जैसे— नीलामी की तिथि, समय, स्थान, नीलामी का विषय, तकनीकी विनिर्देश, अनुमानित लागत, अग्रिम धनराशि जमा, आदि सम्मिलित हों। सार्वजनिक नीलामी/सार्वजनिक निविदा के माध्यम से सरकारी अनुबंधों का प्रदान किया जाना, सार्वजनिक क्रय में पारदर्शिता सुनिश्चित करने, सरकारी क्रय में अर्थव्यवस्था एवं दक्षता को अधिकतम करने, निविदादाताओं के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करने, सभी निविदादाताओं के साथ निष्पक्ष एवं समतापूर्ण व्यवहार प्रदान करने, तथा संबंधित प्राधिकरणों द्वारा अनियमितताओं, हस्तक्षेप एवं भ्रष्ट आचरण को समाप्त करने के उद्देश्य से किया जाता है। यह संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा अपेक्षित है.....।”

53. कहने की आवश्यकता नहीं है कि उचित कारणों से किसी अनुबंध को निजी बातचीत के माध्यम से भी प्रदान किए जाने की स्थिति हो सकती है, किन्तु ऐसा अत्यंत अपवादात्मक परिस्थितियों में ही होना चाहिए, क्योंकि पारदर्शिता के अभाव में सार्वजनिक विश्वास न केवल डगमगाता है बल्कि पूर्णतः चकनाचूर हो जाता है। वर्तमान मामले में, चूँकि अनुबंध किसी प्रकार की समझ-बूझ के माध्यम से किया गया है, जिसका कारण पूर्णतः अगम्य है, अतः इस सिद्धांत को लागू करते हुए भी ऐसा अनुबंध दूषित माना जाना चाहिए।

54. उपर्युक्त विश्लेषण से यह सुस्पष्ट है कि अपीलकर्ताओं द्वारा एम.टी.सी.एल. के साथ सांठगांठ में छल किया गया था और एम.टी.सी.एल. के पूर्ण प्राधिकारियों ने अधिनियम के विरुद्ध तथा निगम के हितों के प्रतिकूल, पूर्ण ज्ञान के साथ कार्य किया था। लाभार्थी अपीलकर्ता हैं। जहाँ तक एम.टी.सी.एल. के पदाधिकारियों का प्रश्न है, हम उनके संबंध में कुछ कहने का इरादा नहीं रखते, क्योंकि तमिलनाडु राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता, श्री सुब्रमणियम प्रसाद, ने हमें अवगत कराया है कि एम.टी.सी.एल. के

पदाधिकारियों के विरुद्ध कुछ कार्यवाहियाँ लंबित हैं। हम अपने कर्तव्य में असफल होंगे यदि हम इस तथ्य का संज्ञान न लें कि निगम को अपने स्वयं के हितों की रक्षा के लिए सतर्क रहना चाहिए था। तथापि, जैसा कि प्रतीत होता है, वह दीर्घकाल तक जागृत नहीं हुआ। राज्य भी जो कुछ चल रहा था उसका मूक दर्शक बना रहा। इन परिस्थितियों में, अपीलकर्ताओं की ओर से न्यायसंगतता दिखाने तथा उन्हें कम-से-कम दो वर्षों तक जारी रहने की अनुमति देने की प्रार्थना की गई है। यह रेखांकित करने की आवश्यकता नहीं है कि इसे वैकल्पिक निवेदन के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उक्त वैकल्पिक निवेदन विचार योग्य नहीं है। ऐसे निवेदन को स्वीकार करने के विषय में सोचना, उन अपीलकर्ताओं को प्रोत्साहन देना होगा जिन्होंने कानून का गला घोंटा, उच्च न्यायालय के निर्णय के अस्तित्व को जानबूझकर नज़रअंदाज़ किया और अंततः घटनाक्रम में बारह वर्षों का लाभ प्राप्त करने की योजना बनाई—जो अवैध लाभ उठाने के लिए एक 'युग' के समान है—जो अनुमेय नहीं है और जो निगम का है तथा जिसे विधि के अनुसार निपटाया जाना आवश्यक है। समस्त कार्रवाई, जैसा कि हम देखते हैं, राजकोषीय प्रदूषण है। यह, यदि हम ऐसा कहने की अनुमति दें, तो वित्त पर अम्लीय वर्षा है, जो वास्तव में निगम की वित्तीय सेहत को ढहा और चरमरा सकती है, जो लोकतंत्र में अनुमेय नहीं है। यह हमें यह कहने के लिए विवश करता है कि कुशलतापूर्वक रची गई योजना में विधि द्वारा शासित सुव्यवस्थित समाज को विनाश की ओर ले जाने की क्षमता है; मानो अपीलकर्ता न्यायालय की कार्यवाही को प्रयोगशाला में किए गए प्रयोग या सीमाहीन उद्यान में साहसिक कृत्य के समतुल्य मानने के लिए दृढसंकल्पित हों।

55. उपर्युक्त विश्लेषण के आलोक में, अपीलकर्ताओं द्वारा एम.टी.सी.एल. के साथ किए गए अनुबंध स्थिर नहीं रह सकते और तदनुसार निरस्त किए जाते हैं। यह निर्देश दिया जाता है कि निगम तत्क्षण यात्री प्रतीक्षालयों के प्रबंधन का अधिग्रहण करेगा और निविदा या नीलामी की प्रक्रिया का सहारा लेकर, जो न्यायसंगत एवं पारदर्शी हो, सभी प्रयोजनों के लिए

उनसे संबंधित कार्यवाही करेगा। हमारा यह निर्देश उच्च न्यायालय द्वारा जारी किए गए अन्य सभी निर्देशों पर प्रभावी रहेगा।

56. इस चरण पर, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि अपीलकर्ताओं की ओर से यह प्रस्तुत किया गया कि उन्होंने संरचनाएँ स्थापित करने तथा कुछ व्यवस्थाएँ करने में अत्यधिक धनराशि व्यय की है। चूँकि हमने अनुबंध को निरस्त कर दिया है और उनका आचरण निंदनीय है, इसलिए उक्त व्यय का पहलू, चाहे उसका परिमाण कुछ भी हो, पूर्णतः अप्रासंगिक है और हम ऐसा अभिनिर्धारित करते हैं।

57. परिणामस्वरूप, एस.एल.पी. (दीवानी) संख्याएं 276 सन् 2007 तथा 852 सन् 2007 से उत्पन्न दीवानी अपीलें निरस्त की जाती हैं और अपीलकर्ता, अर्थात् मैसर्स व्हाइट हॉर्स कम्युनिकेशन, मैसर्स ऐम एसोसिएट्स लिमिटेड, मैसर्स एस.एस. इंटरनेशनल, मैसर्स फ्रंट लाइन मीडिया, मैसर्स ग्रेफाइट पब्लिसिटीज तथा मैसर्स वैष्णवी इमेजेज, प्रत्येक रुपये 5 लाख की लागत निगम को आज से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर अदा करेंगे। श्री ए.टी. मणि द्वारा प्रस्तुत रिट याचिका तथा अपील को हमारे आदेश के अनुरूप निस्तारित किया जाता है और उच्च न्यायालय का आदेश उस सीमा तक पुष्ट किया जाता है जहाँ वह यह अभिनिर्धारित करता है कि निगम को प्राधिकार प्राप्त है। जहाँ तक अन्य निर्देशों का प्रश्न है, वे निर्दिष्ट अवधि के लिए दिए गए थे और इसलिए उन्होंने अपना प्रभाव तथा उपयोगिता खो दी है। जहाँ तक निविदा आमंत्रित करने के निर्देश का संबंध है, हमने उस निर्देश को अपने निर्देश के अनुसार संशोधित किया है और निगम वही निर्देश अपनाएगा जो यहाँ ऊपर उल्लिखित हैं। हम निगम से अपेक्षा करते हैं कि वह शीघ्रता से कार्य करे और अधिक सतर्क बने, क्योंकि वह सामूहिक हित का संरक्षण करता है।

देविका गुजराल

अपीलें निस्तारित।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यावहारिक, कार्यालयीय, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।